दिव्य मसीहा

(महाकाव्य)

महोपाध्याय माणकचन्द रामपुरिया

ISBN 81 86842 21 7

संस्करण	प्रथम 1998
प्रकाशन	कलासन प्रकाशन बीकानेर (राज)
लेजर प्रिंट	श्री करणी कम्प्यूटर एण्ड प्रिण्टर्स बीकानेर (राज)
मुद्रक	कल्याणी प्रिन्टर्स माल गोदाम रोड बीकानेर
मूल्य	120 रुपये

Divya Masiha
(EPIC) by Mahopadhaya Manakchand Rampuria
Price 120/

समर्पण

श्री करुणा-जिसमें छलक रही है-
जिसमें प्रेम भरा है।
दुखियों की सेवा-व्रत लेकर-
भू पर जो उतरा है।

'दिव्य मसीहा' वही भुवन का-
उसकी गाथा अद्‌भुत
भूतल पर वह आलोकित है-
घन में जैस विद्युत।

उसकी ही यह गाथा उसको-
करता स्वय समर्पित,
ग्रहण करो अब 'दिव्य मसहो' -
करता तुझको अर्पित।

माणकचन्द रामपुरिया

आत्माभिव्यक्ति

प्रत्येक युग में पृथ्वी पर ऐसे महामानवों का अवतरण हुआ है, जिनके चारित्रिक बल के समक्ष मानवता नत-मस्तक रही है। प्रकृति अपने क्रिया-कलापों की अजस्र धारा निरन्तर प्रवहमान रखती है। जहाँ जिसकी आवश्यकता परिलक्षित हुई, वहाँ उसकी पूर्त्ति अवश्म्भावी है। जड़-चेतनमय समस्त सृष्टि इससे प्रभावित है। कालावधि में प्रत्येक युग की अपनी आवश्यकताएँ रहती हैं।

आज से लगभग दो हजार वर्ष पूर्व ईसा का आविर्भाव हुआ। उस समय की राजनीतिक-सामाजिक स्थितियों की जो माँग थी, उसकी आवश्यकता पूर्त्ति ईसा मसीह ही कर सकते थे। और यह सम्पूर्ण मानव-समाज के लिए बड़े ही गर्व की बात है कि धरती पर ऐसा दिव्य मसहा प्रकट हुआ, जिसने सेवा-भाव और आन्तरिक करुणा को आधार मानकर समस्त सुषुप्त मानव-जाति को जागरण का ऐसा अमोघ महामत्र प्रदान किया, जो कालातीत है। हर युग और हर सवत्सर में इसका अक्षर-अक्षीण प्रकाश मनुष्य जाति का पथ-प्रदर्शन करता रहेगा।

"दिव्य मसीहा" मेरे करुणा-सवलित भावों की अभिव्यक्ति है। भला ईसा मसीह का धवल चरित्र किसे प्रभावित नहीं करेगा? प्रारम्भ से ही उनका जीवन एक ऐसी अग्नि-शिखा रहा है, जिससे लोगों को पग-पग पर आलोक प्राप्त हुआ है। किसी भी क्षण ये अपने कर्त्तव्य से च्युत या विमुख नहीं हुए। उनका जन्म दैवी परिस्थितियों में हुआ। अत व्यक्तित्व में अलौकिकता की छाप स्पष्ट एव निर्विवाद है। फिर भी मानवीय दृष्टि का सरक्षण इनके चारित्रिक विकास का महत्त्वपूर्ण अग है। लघुवय में ही पिता यूसुफ दिवगत हो गए। जीवन यापन के लिए कुछ करना आवश्यक था। पैतृक कार्य की ओर स्वत उन्मुख हुए। बढ़ईगिरी का कार्य अपनाया। जीवन व्यापार चलने लगा। किन्तु

यह भी सत्य है कि दिव्य आत्माएँ विशिष्ट कार्य सम्पादन के लिए पृथ्वी पर आती हैं। ईसा मसीह भी इसके अपवाद नहीं थे। कुछ विशिष्ट कार्य उन्हें सम्पादित करने थे। फलत आपने निर्दिष्ट पथ पर अग्रसर हुए। करूणा, प्रेम और सेवा-भाव ईसा के जीवन-विकास की आधार-शिला तो है ही, इनके उपदेशों का मूल-मत्र भी यही है। यों तो ईसा मसीह के समक्ष ही उनके अनुयायियों की सख्या काफी वढ गयी थी, किन्तु सभी शिष्यों में बारह शिष्यों की नामावली को प्रमुखता दी गयी है। ये हैं 1 शमौन, जो पतरस कहलाता है, 2 पतरस का भई अन्द्रियास, 3 जब्दी का पुत्र याकूब, 4 याकूब का भाई, 5 फिलिप्पुस, 6 वरतुल्मै, 7 थोमा, 8 चुगी लेनेवाला मत्ती, 9 हल्फै का पुत्र याकूब, 10 तद्दै, 11 शमौन कनानी और 12 यहूवा इस्करियोती, जिसने ईसा मसीह को पकड़वाया था। जिनकी काय-व्यापार में कोई विशेष सगति नहीं थी, उनके नाम नहीं भी आए हों। कविता में यह आवश्यक है कि काव्य-गुणों को सुरक्षित रखा जाय। मैंने काव्य-प्रवाह के सरक्षण के लिए वैसे ही अशों को पिरोने की चेष्टा की है, जिनसे पुस्तक की उपयोगिता वढे।

"दिव्य मसीहा" परम पिता परमेश्वर के पुत्र ईसा के चरित्र का दिव्यालोकन है। मेरे पाठकों को इससे थोड़ा भी आनन्द प्राप्त हो सका तो मैं अपना परिश्रम सार्थक समझूँगा। तथास्तु

रामपुरिया भवन
रामपुरिया मार्ग बीकानेर

माणकचन्द रामपुरिया

दिव्य मसीहा
(महाकाव्य)

दिव्य मसीहा ईसा मसीह के चरित्र पर आधारित एक महाकाव्य है। महोपाध्याय माणक्चन्द रामपुरिया की महाकाव्य श्रृखला का अब तक का यह अतिम पड़ाव है। पहला प्रश्न जो दिमाग में आता है वह यह है कि ऐसी क्या आवश्यकता थी, ऐसी क्या छटपटाहट या विवशता थी ऐसी क्या उत्कटता थी जिसने इस महाकाव्य के सृजन की ललक पैदा की। हिन्दु जैन, बौद्ध और सिख धर्म प्रवर्तकों तथा अनेक सतों के चरित्रों का प्रणयन करने के बाद रामपुरियाजी को शायद यह लगा होगा कि उनकी यह दर्शन-यात्रा उस समय तक अधूरी रहेगी तब तक विश्व को आलोकित करने वाले एक महापुरुष और उसके द्वारा प्रणीत धर्म को महाकाव्य का विषय नहीं बनाया जाए। शायद एक और कारण भी रहा होगा और वह यह है कि इस महाकाव्य के चरित्रनायक का कभी भी यह आग्रह नहीं रहा कि वह ईश्वर , नबी या पगम्बर है, वह तो केवल इश्वर का पुत्र है और चूकि हम सभी इश्वर की सतानें (यानी पुत्र-पुत्रियाँ) हैं अत भीतर तक छलकने वाले अपनत्व के आग्रह ने भी रामपुरियाजी को आलोकित किया होगा। कारण कुछ भी रहा हो, यह महाकाव्य वैश्विक दर्शन-यात्रा की उनकी परिक्रमा को पूरा करने का पाथेय अवश्य है।

महाकाव्य के शास्त्रीय विवेचन के चक्कर में न भी पड़ें तो इतना तो तय है कि रामपुरियाजी ने मोट-मोट सिद्धान्तों का पालन अवश्य किया है। उनका चरित्र नायक आदर्श पुज है प्रेरणा देने वाला है उदात्त है और जीवन-यात्रा में अनेक विपत्तियों को सहन करते हुए भी सिद्धान्तों के प्रति अडिग रहने वाला है। इस महाकाव्य में 27 सग हैं एक औपन्यासिक कथा-प्रवाह है आवश्यक छद-परिवर्तन हैं काव्य गुणों का निरूपण हैं, जहाँ-तहाँ अन्तद्वन्द्व भी हैं प्राकृतिक सुषमा का वर्णन है तथा मन पर अमिट छाप छोड़ने वाले दृश्य बिम्ब हैं। यद्यपि यह आवश्यक नहीं है कि शास्त्रीय मर्यादाए अटल नियमों की तरह बाध्यकारी हों अनेक ऐसे महाकाव्य हैं जिन्होंने इनमें से कई नियमों उपनियमों का अतिक्रमण करके भी अपना महाकाव्यत्व कायम रखा है पर फिर भी रामपुरियाजी ने यथासभव शास्त्रीयता के आग्रह पर भी ध्यान दिया है। महाकाव्य की भाषा और शैली रामपुरिया के व्यक्तित्व की बुनावट के अनुसार सादगी और सहजता लिये हुए है।

इस महाकाव्य को मोटे तौर पर चार खण्डों में विभाजित किया जा सकता है। शुरुआत के सात सर्ग ईसा के जन्म के पूर्व के हैं। इनमें सृष्टि की रचना अधकार में प्रकाश का उदय भूमि, सागर, पर्वत एव वनस्पति का सृजन, जीव जन्तुओं के बाद आदम का जन्म, अदन वाटिका की सुरम्यता के बीच एक विराट भाव-शून्यता ज्ञानवृक्ष के वर्जित फल को खाने की मनाही प्रीत का अकुरण हव्वा का जन्म, साँप की कुटिलता से स्वर्ग से आदम और हव्वा का निस्कासन, पृथ्वी पर पापों का अभ्युदय महान प्रलय और जल-प्लावन, विनाशलीला के बीच नूहा के जलयान में बीज रूप में जीवन का सरक्षण धर्म की पुन प्रतिष्ठा राजतत्र का उदय ज्ञान की सत्ता के विकास के साथ पापकर्मों का उदय ईश्वर द्वारा नबियों के माध्यम से भेजे गये सदेश आदि अनेक कथानकों को पिरोया गया है। इतनी लम्बी कथा-यात्रा को साधने के पीछे रामपुरियाजी का आखिर क्या उद्देश्य रहा होगा? क्या वे इस महाकाव्य को सीधे ही ईसा के जन्म से शुरू नहीं कर सकते थे? इसका उत्तर देने से पूर्व रामचरितमानस जैसे महाकाव्य की परम्परा को भी ध्यान में रखना होगा। बालकाण्ड की शुरुआत सीधे राम के जन्म से नहीं होती, उसकी पृष्ठभूमि में अनेक अन्तर्कथाओं सवादों और कथा-प्रसगों को स्थापित करने के बाद राम के अवतरण की आवश्यकता को प्रतिपादित किया गया है। सृष्टि के उदय से लेकर ईसा की मृत्यु और ईसा के बाद के दो हजार वर्षों की मानवीय सस्थितियों के बीच एक जुडाव एक अन्तर धारा एक योगक तन्तु बना रहे, शायद इसी भावना से दिव्य मसीहा का चौथाई भाग ईसा के जन्म के पूर्व का है। यदि केवल घटनाक्रम ही महत्वपूर्ण होता तो महाकाव्य के सृजन की आवश्यकता ही क्या थी? प्रथम खण्ड में काव्यगुणों के निर्वाह की पूर्ण चेष्टा की गई है। काव्यधारा में अन्तर के सगीत की अनुगूज बराबर बनी रहती है। प्राणों की धड़कन के बीच भाव-शून्यता के कारण व्यक्तित्व के बिखरने की व्यथा झलकती है। स्वय ईश्वर का अन्तर्द्वन्द्व प्रकट होता है कि मानव के अधूरेपन को आखिर कैसे भरा जाए किस तरह उसको भाव धारा से जोड़ा जाए और सवाद को कैसे निरूपित किया जाए। ज्ञान की सत्ता के व्यामोह में मानव के पतन को रूपायित करने में भी मानसिक ऊहापोह प्रकट

होती हैं। प्रलय का चित्रण जिस रूप में किया गया है वह ऐसे भयावह दृश्य बिम्ब उभारता है जो व्यक्ति को रोमांचित किये बिना नही रहता। प्रलय के बाद की शान्ति दो महायुद्धों के बाद आज के विश्व की कथित शांति जैसी ही है। सरल भाषा की सादगी के साथ प्रथम सात सर्गो की कुछ पक्तिया यहा उद्धृत की जाती हैं-

सृष्टि का सातवा दिन

एक दिवस यह आशिश का था
सबसे परम पुनीत बना
सब जीवों के लिए यही था
अन्तर का सगीत बना

मनुष्य का एकाकीपन

प्राणों में धड़कन थी लेकिन
सब कुछ बिखरा-बिखरा था
अभी तलक नयनों में कोइ
आकर कभी न निखरा था।
लगे सोचने कैसे इसका
कष्ट निवारण होगा?
कैसे अपना कहने वाला
कोई भी जन होगा?

वर्जित फल

तेरे हित यह मरण राग है
खुद का सदा बचाना
ज्ञानवृक्ष की तरफ कभी मत
अपना हाथ बढाना

प्रलय

बादल के दल घिरे उमड़
जैसे कटक प्रलय
तड़प-तड़प कर बिजली कौंधी
जैसे काल अभय
दिवस और फिर रात्रि चतुर्दिश
तम का जोर बढा था
बड़े-बड़े पर्वत शिखरों पर
प्रलय प्रवेग चढा था

पवित्रता की साख

लोकोपवाद और कानून दोनों के बीच में यदि तुलना की जाए तो मनुष्य कानून के भय से कहीं अधिक लोकोपवाद के भय से परिचालित होता है। ये सामाजिक अर्गलाए ये रूढ़ियों के बन्धन योनाचारों के पीछे पनपने वाली ये मान्यताए कानून से कहीं ज्यादा ताकतवर होती हैं। महाकाव्य के दूसरे खण्ड में आठवें से बारहवें तक के सर्ग आते हैं। मरियम का कौमार्य और अद्‌भुत रूप-लावण्य उषा के समान उसकी पवित्रता, यूसुफ का चरित्र श्रमसाध्य जीवन के प्रति उसका आग्रह, कुमारी मरियम द्वारा गर्भधारण, लोकोपवाद के भय से यूसुफ द्वारा मरियम के त्याग का विचार, देवदूत की भविष्यवाणी जनगणना सम्बन्धी राजाज्ञा के कारण बेथलेहम नगर की ओर प्रस्थान सकडे और दुरूह पर्वतीय मार्गों पर गर्भवती मरियम के चलने की विवशता बिना किसी प्रचार-प्रसार या उत्सव के विश्व की एक महान घटना का आयोजन ईसा का जन्म चरणीगृह में रखने की लाचारी पुच्छल तारे द्वारा दैवी उपक्रम का सकेत, आततायी राजा हिरोदेश को अपने वध की आशका दो वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों की निर्मम हत्या ईसा को लेकर माँ-बाप का मिश्र की ओर प्रस्थान आदि अनेक कथानक इस खण्ड के कथा-प्रवाह में आते हैं।

रामपुरियाजी की विशेषता यह है कि वे विस्तार में नहीं उलझते, सकेत मात्र में बात करके काव्य की कसावट को ध्यान में रखते हुए आगे बढ जाते हैं। उनके सामने दोनों विवशताए एक साथ रहती हैं- कथा-प्रवाह बाधित न हो पर काव्यगुण भी बराबर बने रहें-इन दोनों के बीच में कोई सतुलन तो होना ही चाहिए। यह सतुलन ही इस महाकाव्य की विशेषता है। सादगी के साथ उपमाओं का सौंदर्य देखते ही बनता है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं-

1 मरियम का रूप-लावण्य

बड़ी मनोहर रूपवती थी
नूतन गरिमा वाली
पर्वत की निर्झरणी जैसी
पुण्य बढाने वाली
बड़ी सौम्य शालीन विनय की
मानो मूर्ति खड़ी हो
दैवी गुण से दीप्त शिखा में
मुक्ता ज्योति जड़ी हो।
वह ,पवित्र थी ऊषा जैसी

पूनम-सी थी पावन
किसी तरह का वहां नहीं था
किसी कलुष का बंधन

यूसुफ का अन्तर्द्वन्द्व

इसी बीच अब गर्भवती थी
मरियम असल कुआरी
सुनते यूसुफ के तन-मन में
जाग उठी चिन्गारी
सोचा मन में इसे ग्रहण अब
मैं तो नहीं करुगा
किसी तरह भी मरियम को मैं
अब तो नहीं वरुगा
मान रहा मैं मरियम कोइ
पाप नहीं कर सकती
पर लोकोपवाद के कारण
वह भी अब डर सकती

इसीलिए अच्छा है उसका
निर्मम त्याग करु मैं
अपने माथे पर कलक का
पत्थर नहीं धरु मैं।

कितनी सलवटें हैं दिमाग में- त्याग करु या न करु के बीच एक तरफ मरियम की आदिम पवित्रता क प्रति विश्वास उभरता है तो दूसरी और लोकोपवाद का भय त्रस्त किये रहता है। गर्भवती कुआरी के वरण के लिए आखिर यूसुफ का तैयार हो जाना तत्कालीन स्थिति में चाहे देवदूत की वाणी का प्रभाव रहा हो पर आज का सत्य कितना खुरदरा ओर कितना भयावह है- इसे सोचने के लिए बाध्य होना पड़ता है। आज तो कुमारियों को शादी का वचन देकर उनके साथ यौन सम्बन्ध स्थापित करने और गर्भवती हो जाने पर तिलाजलि दे देने की घटनाए आम हो गई हैं। ऐसे में यूसुफ के माध्यम से आज की पीढ़ी को सोचने का एक सकेत दिया गया है-

मरियम को ले आया यूसुफ
सादर अपने घर में
तनिक न कोई भय था उसके
निमल भाव प्रखर में

अपने बचाव के लिए हिरोदेश द्वारा दो वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों की निर्मम हत्या हमें कस के द्वारा बालकों के कत्ले आम की याद दिलाती है। उसका लक्ष्य तो कृष्ण था पर कृष्ण को पहचानें कैसे ? इसलिए सोचा सद्यजात सभी बच्चों को क्यों नहीं मरवा दिया जाए। हिरोदेश ने भी यही किया।

फिर सोचा जाने वह बालक कब है भू पर आया
समय जन्म का नहीं किसी ने सही-सही बतलाया
सभव हे कुछ वर्ष पूव ही वह जन्मा हो भू पर
आज खोजने आए हों सब थोड़ा समय बिता कर
यही सोच कर उस निर्दय ने निर्धिन चाल चलाई
दो वर्षो के सब बच्चों की हत्या वहा कराई

एक आलोक रेखा

तीसरा खण्ड सर्वाधिक महत्वूपर्ण है क्योंकि इसमें पाठक को ईसा के बचपन की घटनाओं से लेकर जीवनपर्यन्त दिये गये उपदेशों की निर्झरणी का आस्वाद मिलता है। ईसा का जीवन घटना-प्रधान न होकर शिक्षा-प्रधान है। घटनाए तो मात्र साक्ष्य हैं कि उपदेशों को आचरण में कैसे उतारा गया? तेरहवें सर्ग से लेकर अठारहवें सर्ग तक के आख्यान इस खण्ड के अतर्गत आते हैं। ईसा का बपतिस्मा शैतान द्वारा उसकी परीक्षा शिष्यों की सख्या में वृद्धि आदि घटनाओं के बीच जीवन को प्रकाश देने वाले उपदेश हैं। इनमें से कुछेक का आस्वाद आप भी लीजिए-

1 कहा धन्य वे हैं जो मन से
दीनहीन से रहते
राज्य स्वर्ग का उनका ही है
ऐसा ही प्रभु कहते

2 धन्य वही जो क्षुधाग्रस्त हे
धर्म हेतु जो प्यासा
ऐसे ही जन की दुनिया में पूरी होगी आशा

3 धन्य वही जो जन-जन में
नित मेल बढाया करते
ऐसे जन ही परमपिता के
पुत्र कहाया करते

4 दान करो पर ऐसा कोई
तनिक नहीं पहचाने
दाया हाथ कहा क्या देता
बाया हाथ न जाने

5 करो प्रार्थना प्रभु की लेकिन पाखण्डों से बचकर
कभी आवरण मत आने दो अन्तग्तर के सच पर
6 कल की कोई बात न सोचो
सागर जल भर लेगा
यही सत्य है कल की चिन्ता
कल अपने कर लेगा

दुरभिसंधियों के बीच

चौथा खण्ड (सर्ग 19 से 27 तक चमत्कारों षड्यन्त्रों एव दुरभिसंधियों का खण्ड है। यह आज की समसामयिक घटनाओं की गंध से भरा पड़ा है। पद प्रतिष्ठा या सत्ता की लड़ाई में जब अपने से बहुत आगे निकले हुए व्यक्ति को परास्त अथवा कलंकित करना होता है तो लोग या तो प्रचार तंत्र को काम में टोते हैं अथवा धन के बल पर दलबदल करवाते हैं अथवा ऐसा दूषित वातावरण पैदा कर देते हैं कि जनभावनाएं भड़क उठती हैं अथवा न्यायतंत्र का मखौल करते हुए अन्यायपूर्ण निर्णय दिये जाते हैं। अनेक देशों में होने वाले राजनीतिक घटनाचक्रों में किसी समय के नायकों के आकस्मिक-पराभव इसी भावना के प्रतीक हैं। यही सब कुछ धार्मिक आध्यात्मिक अथवा ज्ञान के क्षेत्र में भी होता आया है। गैलीलियो का या सुकरात का भला क्या दोष था कि उनको मिटाने के लिए ऐसे-ऐसे कुचक्र किये गये मीराँ ने किसी का क्या बिगाड़ा था उसे जहर दिया गया कैनेडी मार्टिन लूथर किंग महात्मा गाँधी या राजीव गांधी का क्या दोष था कि उनको षड्यन्त्रकारी तरीकों से समाप्त कर दिया गया? इतिहास महापुरुषों के दुखद अन्त की एक दारुण कथा है। चौथे खण्ड के सर्ग एक तरफ ईसा की बढ़ती लोकप्रियता दीनों पर दया और रोगियों के उपचार जैसे चमत्कारों से भरे हैं तो दूसरी ओर षड्यन्त्रों, झूठे दोषारोपणों और अन्तत मृत्युदण्ड जैसे घृणित निर्णयों की झलक देते हैं। आज के राजनीतिक परिदृश्य की तरह उस समय भी विरोधियों द्वारा ईसा के एक शिष्य यहूदा को चाँदी के टुकड़ों के बल पर अपने साथ मिला लिया गया था ताकि ईसा पर घृणित दोषारोपण करके राजदण्ड का भागी बनाने का कुचक्र किया जा सके।

महापुरुषों के साथ चमत्कारों की कथाएं जुड़ी रहती हैं। ईसा के जीवन में अनेक ऐसी घटनाएं हुई पर उनका चरम लक्ष्य अंधों अपाहिजों एवं मृत व्यक्तियों के परिवारों को सान्त्वना व सुख देने का या यानी मानव कल्याण ही केन्द्रीय बिन्दु रहा। ईसा के आत्म-सुख

के लिए यानी अपनी भलाई के लिए तो कभी कोई चमत्कार किया ही नहीं। दुखियों का त्राण ही उनका अभीष्ट रहा। उद्वेलित सागर को शात रहने का कहना और सागर का मान जाना जैसे दृष्टान्त इसी रूप में समझे जा सकते हैं।

ईसा को अपनी मृत्यु का पूर्वाभास था। श्री माणकचद रामपुरिया ने अपनी सादगी व सहज शैली में इसे यों रूपायित किया है –

1 देखो मानव पुत्र शीघ्र ही
पकड़ा जाने वाला
धरती पर सबके सन्मुख ही
मारा जाने वाला

2 कहा कि खाओ मोद मनाओ
समझो मेरी देह यही
प्याला देकर कहा कि इसमें मेरे खू की धार यही।

इस खण्ड में शास्त्रियों एवम् फरसियों द्वारा किये गये षड्यन्त्र ईसा पर ईश्वर एव नबियों के विरोधी होने तथा दुष्टात्माओं के साथ मिलकर चमत्कार करने के आरोप तरह-तरह के ढोंग करके लोगों को बरगलाने व राज्यसत्ता से विरोध करने के अभियोग आदि कथानकों को समेटा गया है। न्याय के ढोंग को दर्शाया गया है। ईसा द्वारा अपने हाथों से क्रॉस लाने व उस पर चढाए जाने के दृश्यबिम्बों को उभारा गया है तथा अन्तत पुनरुत्थान के कथानकों को पिरोया गया है। कुछ पक्तिया दृष्टव्य हैं –

1 यह विरोध की आग जगत में
कब तक जलती जाएगी?
कौन शक्ति है जो फिर जगकर
जग का दाह मिटाएगी ?

2 देखो मानवपुत्र स्वय ही
क्रूस उठाए आता है
बलिवेदी पर क्षमाशील हो
आज चढाया जाता है

3 ईसा आज सदेह नहीं है
गुजित घर-घर वाणी
जन-जन के हितसाधन में ही
पावन ध्वनि कल्याणी

4 ईसा तुम्हें प्रणाम कि तुमने

जग को राह दिखाई
सेवा में प्रभु का दर्शन है
सबको बात बताई

रामपुरियाजी ने जहाँ-तहाँ मानसिक ऊहापोह एव अन्तद्वन्द्व दिखलाए हैं पर यदि वे यहूदा की आत्मग्लानि ओर तद्जन्य आत्महत्या के उद्वेगों आत्मालापों एवम् ऊहापोहों को जरा विस्तार से चित्रित करते तो इस महाकाव्य के इस अश को अधिक जीवन्त किया जा सकता था। इसी प्रकार मरियम के कौमार्य-भग की घटना व यूसुफ के अन्तर्द्वन्द्व को कुछ अधिक तीव्रता के साथ रुपायित किया जा सकता था। अन्तद्वन्द्वों की भीषण यत्रणा के बाद किसी की वाणी में जो वजन होता है वह साकेत में ककेयी की आत्मस्वीकृति में देखा जा सकता है। रामपुरियाजी ने अन्तद्वन्द्वों की झलक अवश्य दी है- बात तो केवल तीव्रता और कुछ अधिक विस्तार की है। शायद उन्होंने सोचा हो कि इससे महाकाव्य का कलेवर थोडा बढ सकता है। आज के पाठक के पास इतनी फुर्सत कहा है कि वह विस्तार में उलझे? यह सोच अपनी जगह सही है, पर कलात्मकता के उभार के लिए विस्तार की थोड़ी-बहुत जोखिम उठाना भी श्रेयस्कर होता है। घटनाए चाहे दो हजार वर्ष की हों पर उन्हें यदि इस तरह रुपायित किया जाए कि वे आज की समसामयिक स्थितियों के सदर्भ में भी प्रासगिक लगें तो महाकाव्य की जीवन्तता बढती है।

कुल मिलाकर दिव्य मसीहा रामपुरियाजी की महाकाव्य-यात्रा का एक महत्वपूर्ण पड़ाव है। इसमें दिल और भाषा दोनों की सहजता है। यह सहजता ही एक प्रकार से भाषा का नैसर्गिक सौन्दर्य है। जहा नैसर्गिक सौन्दर्य हो वहा कृत्रिमता या अनावश्यक अलकरणों की कोई खास अहमियत नहीं होती- उलटे भाषा बोझिल बनती है और शैली आरोपित सहजता तो अनेक महाकाव्यों की प्राणरेखा सिद्ध हुई है। इस महाकाव्य में मन की बात को सीधे-सादे ढग से कहा गया है- सच पूछो तो मन की बात मन खोलकर कही गई है। रामपुरियाजी को साधुवाद।

भवानीशकर व्यास 'विनोद'
1-स-9 पवनपुरी, बीकानेर

१ सृष्टि रचना

उनको सदा प्रणाम कि जिनमे—
दया—भाव सरक्षित है
मानवता की पावन श्रद्धा
उनके पद पर अर्पित है।

जब से सृष्टि चली भूतल पर—
जीवन भी अविराम चला
अपने कर्मो से सचालित—
पाप—पुण्य अभिराम चला।

धरा–गगन औ सब तत्त्वो का–
प्रभु ने जब निर्माण किया
बने रहो उपभोक्ता सब के–
मानव को वरदान दिया ।

पहले तो तम का डेरा था–
धरती थी वीरान पडी
महाशून्य दुर्भेद्य काल की–
प्रतिमा थी सुनसान खडी ।

इसे मिटाकर प्रभु ने भू पर–
उजियाला सम्भार दिया
एक–एक कर सब तत्त्वो मे–
नव जीवन सचार किया ।

सकल सृष्टि की सरचना मे–
बीत गए थे सात दिवस
कर्म शुभाशुभ करने को ही–
हुए मनुज फिर स्वय विवश ।

किन्तु मनुज भी इस धरती पर–
रहता अपने–आप बँधा
उसकी उत्पत्ति का दर्शन भी–
मिलता भू पर स्वय सधा ।

तम के घोर शून्य के भीतर—
जब था नया प्रकाश हुआ
रात—दिवस दो भागो मे ही—
बँट कर नया सुहास हुआ ।

तम को रात लगे सब कहने—
ज्योतित दिन का नाम हुआ
निश्चित एक अवधि तक रहने—
का ही उनका काम हुआ ।

दिन के ढलने पर सध्या की—
सज्ञा भी अभिजात बनी
रात ढले पर सधि—घडी ही—
सरस सलोनी प्रात बनी।

इसी तरह पहला दिन बीता—
भू पर फिर आकाश बना
रात—दिवस के साथ धरा पर—
सागर औ वातास बना ।

नयी वनस्पति—पौधे सब भी—
उगकर भू पर स्वय जगे
फल—फूलो से लदे वृक्ष थे—
मादक रस मे खूब पगे ।

सूर्य–चन्द्र–अनगिन तारो की–
नभ मे छाई विमल छटा
इनकी ज्योति किरण से भू पर–
तम का आकुल जोर हटा।

दिवा–रात्रि मे अलग–अलग सब–
रश्मि–केतु फहराते थे
दिन मे सूरज और रात मे–
चन्द्र ज्योति बरसाते थे।

जल–जीवो ने जन्म लिया फिर–
पछी नभ मे उडते थे
प्रभु की इच्छा से ही प्राणी–
जीवन धारण करते थे।

फिर धरती के जीव–जन्तु औ
मानव का निर्माण हुआ
सभी जीव औ सब तत्त्वो पर–
उसका शुभ अभिधान हुआ।

प्रभु ने निर्मित कर तत्त्वो को–
मानव को निज रूप दिया
छ दिन मे ही इच्छा वल से–
कार्य धरा का पूर्ण किया।

और सातवाँ दिन जब आया—
प्रभु ने था विश्राम लिया
सात दिनो की अवधि बाँट कर—
एक दिवस आराम किया।

एक दिवस यह आशिष का था—
सब से परम पुनीत बना
सब जीवो के लिये यही था—
अन्तर का सगीत बना।

सभी प्राणियो से फिर वे बोले—
प्रभु को केवल याद करो
कभी नहीं अपने अन्तर मे—
कोई शोक–विषाद करो॥

२ आदम

तरह–तरह के जीवो से ही–
धरती थी परिपूर्ण हुई
किन्तु नहीं अब भी प्रभु–इच्छा
पूरी थी सम्पूर्ण हुई।

जीव सभी थे चित्र–लिखित से–
यत्र–रूप सब लगते थे
भावो के उद्वेग हृदय म–
वहॉ न कुछ भी जगते थे।

मानव छटा मिली थी जिसको—
वह भी उन्मन दिखती थी
हृदय—पटल पर किसी तरह की—
वहॉं न धडकन दिखती थी।

सब जीवो मे भिन्न मनुज था—
सब पर शासन करता था
लेकिन वह भी भाव—शून्य था—
मात्र उदर ही भरता था।

क्षुधा परिधि से आगे कुछ भी—
देख न कोई पाता था
ज्ञान नहीं था रूदन हृदय को—
पता न कब हर्षाता था।

सुख—दुख से सब अलग पडे थे—
अन्तर से पाषाण हुए
प्राणवान सब हो कर भी थे—
सभी तरह निष्प्राण हुए।

भूख लगे पर खा—पीकर सब—
चुपके से थे सो जाते
जीवन—यापन के घेरे से—
बाहर कभी न हो पाते।

अपने मे ही लीन सभी थे—
नही किसी के अग लगे
नही किसी के नयन खुले थे—
परम प्रीति के रग लगे ।

प्रभु ने भू से गीलि मिटटी—
लेकर कुछ निर्मा किया
रूप बना मानव का उसको—
जीवन का वरदान दिया ।

निज स्वासो से फूँक मार कर—
प्रभु ने उसे जगाया था
आदम कह कर नयी मूर्त्ति को—
अपने गले लगाया था ।

यो तो और मनुज थे भू पर—
प्रभु की इच्छा से निर्मित
बडे–बडे दल–फूल खडे थे—
प्रभु की करुणा से सिंचित ।

किन्तु सभी से भिन्न अलग ही—
आदम नूतन प्राणी था
जीवन के इस वृहत कुण्ड मे—
वह अविचल अभिमानी था ।

अविचल था इसलिए कि अब भी--
भाव नहीं जग पाते थे
कहीं किसी कोमल नयनो से--
नयन नहीं लग पाते थे।

प्राणो मे धडकन थी लेकिन--
सब कुछ बिखरा--बिखरा था
अभी तलक नयनो मे कोई--
आकर अभी न निखरा था।

प्रभु ने रूप दिया था लेकिन--
और अभी कुछ बाकी था
जीवन के पथ पर इस नर को--
चलना तो एकाकी था।

मूर्त्त बने यह भाव इसी का--
आगे कुछ सयोग बना
नयी प्रेरणा से जीवन का--
कुछ नूतन उपयोग बना।

प्रभु की इच्छा से आदम ने--
नूतन जीवन वरण किया
धरती की मिटटी से उठकर--
भूतल पर दृढ चरण दिया।

प्रभु की इच्छा से वह हरदम—
जीवन यापन करता था
भाव नहीं थे पूर्ण जगे पर—
प्रभु से हर क्षण डरता था।

प्रभु ने जो निर्देश दिया वह—
पालन करता था निश्चय
प्रभु की आज्ञा से ही भू पर—
सब दिन रहता था निर्भय।

यह विशिष्ट प्राणी था भू पर—
प्रभु मे दृढ विश्वास लिए
निखिल सृष्टि के बढते क्रम का—
अपने मे इतिहास लिए॥

३ अदन वाटिका

प्रभु ने पूर्व दिशा मे नूतन–
सुन्दर बाग लगाया
नए–नए फल–फूलो से ही–
उसको खूब सजाया ।

अदन–वाटिका की सज्ञा से–
हुई वही अभिभूषित
इस पृथ्वी पर उससे बढकर–
जगह नहीं थी पूजित ।

चारो ओर विटप थे सुन्दर–
पुष्पित औ अभिरजित
सभी तरह से मनहर नूतन–
सुमनो से अभिव्यजित ।

बीच वाटिका मे जीवन के–
वृक्ष लगे थे अभिनव
तरह–तरह के पशु–पक्षी तक–
वहाँ मनाते उत्सव ।

वहीं वृक्ष थे ऐसे जिनसे–
हृदय–चक्षु खुल पाता
भले–बुरे का उससे ही था–
ज्ञान स्वय मिल जाता ।

इसके फल थे भिन्न सभी से–
सुन्दर और निराले
ये थे बगिया की शोभा को–
खूब बढाने वाले ।

बगिया के सिचन हित नदियाँ–
आई थी जलवाली
चार नदी थी सभी दिशा की–
मन को हरने वाली ।

इनका जल था शीतल जिनसे—
शान्ति हृदय मे जगती
मानव की स्थिति भिन्न इन्हीं से—
भूतल पर थी लगती ।

अदन—वाटिका आदम को दे—
प्रभु ने उसे बताया
तेरे ही खातिर है मैंने—
ऐसा बाग बनाया ।

यह अमूल्य है बाग करो तुम—
इसकी अब रखवाली
फल—फूलो से भरी—लदी है—
तरू की डाली—डाली ।

तुम्हे देखना है बगिया को—
करनी है निगरानी
समय बताएगा कैसी है—
इसकी अमर कहानी ।

मीठे—मीठे फल है इसके—
जितना चाहो खाओ
बेखटके तुम किसी वृक्ष से—
मन वांछित फल पाओ ।

किन्तु कभी भी भले–बुरे का–
ज्ञान वृक्ष मत छूना
इसका फल है इस धरती पर–
दुख का वृहद् नमूना।

ज्ञान–वृक्ष का कोई भी फल–
कभी नहीं तुम खाना
उसको खाते होगा तुम को–
भूतल पर मर जाना।

ज्ञान–वृक्ष के फल को आदम–
वर्जित ही तुम जानो
इसे छोडकर जो इच्छा हो–
खाकर खुद पहचानो।

सब है मीठे सभी तरह से–
आयु बढाने वाले
मानव के जीवन मे सुख की–
ज्योति जगाने वाले।

ज्ञान–वृक्ष है ऐसा जिससे–
बचकर ही तुम रहना
इसके फल को खाने की तुम–
कभी न इच्छा करना।

तेरे हित यह मरण–राग है–
खुद को सदा बचाना
ज्ञान–वृक्ष के पास कभी मत–
अपना हाथ बढाना ।

एक यही निर्देश तुम्हे मे–
इस भूतल पर देता
तेरे मन की मधुर भावना–
इससे रहे अचेता ।

इसे छोड सब वृक्षा के फल–
खाओ औ हर्षाओ
अदन–वाटिका मे रह कर तुम–
जीवन का सुख पाओ ॥

४ आदम का एकान्त

अदन–वाटिका मे आदम थे–
सुख से समय बिताते
किसी तरह के राग–द्वेष के–
भाव न मन मे आते ।

सभी तरह निर्द्वन्द्व हृदय पर–
कोई भार नही था
शान्त सिन्धु–सा उसके मन मे–
कुछ उद्‌गार नहीं था ।

लेकिन प्रभु ने सोचा शायद—
आदम है एकाकी
साथ किसी के रहने की हो—
उसमें इच्छा बाकी।

खुलकर मन से नहीं किसी से—
कुछ भी वह कह पाता
लेकिन भीतर—भीतर निश्चय—
होगा वह अकुलाता।

सृष्टि बड़ी है जीव—जन्तु सब—
भूतल के ये प्राणी
खोल न पाते मेरे सम्मुख—
अपने मन की वाणी।

उनमें काई भाव नहीं पर—
मैं ही सब कुछ दूँगा
बालक है सब इनकी इच्छा—
मैं ही पूर्ण करूँगा।

प्रभु ने सोचा सब जीवों को—
उसके सम्मुख कर दूँ,
आदम का एकान्त भुवन के—
जीवों से ही भर दूँ।

प्रभु ने तत्क्षण सब जीवो को—
एक—एक कर लाये
तरह—तरह के पशु—पक्षी से—
उसको तनिक लुभाये ।

लेकिन आदम अपने व्रत से—
तनिक नहीं टल पाया
रग—बिरगे फूलो पर भी—
तनिक नहीं ललचाया ।

जो भी आते उन जीवो का—
नामकरण वह करता
सब जीवो के प्राकृत गुण से—
उसका स्नेह उभरता ।

लेकिन कभी किसी को अपने—
पास न रहने देता
किसी जीव के मधुर प्यार का—
भार न मन पर लेता ।

साथ सभी के रहकर भी वह—
सब से बहुत अलग था
सब जीवो मे आदम सबसे—
रहता विलग—विलग था ।

बोला प्रभु से-- मैने केवल--
सदा आपको जाना
और दूसरा तत्त्व कहाँ है--
कभी नहीं पहचाना ।

मेरा है एकान्त कहाँ यह--
साथ आप नित रहते
मेरा दुख तो आप स्वय ही--
इस भूतल पर सहते ।

प्रभु ने कहा कि इससे कोई--
बात नहीं बन पाती
मेरे हृदय--सिन्धु मे नूतन--
लहर स्वय इठलाती ।

इसीलिए मै स्वय यहाँ पर--
नूतन काम करूँगा
जैसे होगा तेरे मन का--
यह एकान्त भरूँगा ।

डरो नहीं तुम कभी किसी से--
प्रभु मे ध्यान लगाओ
मेरे जो निर्देश उन्हीं पर--
चलकर यश फैलाओ ॥

मानव का श्रृंगार यही है—
साथ किसी के रहना
सुनना भाव हृदय का कोमल—
और अन्य को कहना ।

सुनने औ कहने का यह क्रम—
आपस मे जब चलता
तभी हृदय के बीच दीप-सा—
कोई भाव सुलगता ।

अपना बनकर नर अनन्त की—
प्रेम-सुरभि पा लेता
अतल सिन्धु की स्वर-लहरी पर—
अपनी नैया खेता ।

प्रभु ने देखा— नहीं सहायक—
आदम को है मिलता
अब तक के सब जीवो से था—
उसका हृदय न खिलता ।

प्रभु ने तब गहरी निद्रा मे—
आदम को था डाला
उसकी पसली की हड्डी का—
कोई तन्तु निकाला ।

उसी अस्थी से प्रभु ने तत्क्षण—
नारी एक बनायी
महाशून्य मे मानो कोई—
नूतन ज्योति जगायी ।

ऑख खुली तब आदम बोला—
तुम से अलग न होगे
प्रेमिल मन की धड़कन से हम
क्षणभर विलग न होगे

प्रीति–रीति से इस भूतल पर—
साथ सदा रह लेंगे
विपदाओ के गहन थपेडे—
एक साथ सह लेगे ।

एक तन्तु के दोनो प्राणी—
आपस मे मिल आए
ज्ञान–हीन उस शून्य कक्ष मे—
नूतन भाव जगाए ।

नर–नारी सब वस्त्र–हीन थे—
लेकिन लाज न जगती
शून्य–ज्ञान से हुए हृदय मे—
कैसे लज्जा लगती ।

आदम के ही साथ धरा पर—
हव्वा भी नित रहती
बड़े प्रेम से आदम को थी—
मन की बाते कहती ।

★★★

अदन–वाटिका के जीवो मे—
एक सर्प था काला
उसने अपनी कुटिल बात से—
सब का मन मथ डाला ।

ज्ञात हुआ जब उपवन मे है—
ज्ञान–वृक्ष यह वर्जित
इसके फल को कोई प्राणी—
कभी न खाए किंचित ।

तभी सर्प बोला हव्वा से—
बात हमारी मानो
इस फल को खाने से प्रभु–सा—
बनता प्राणी जानो ।

प्रभु ने रोका उनसा कोई—
बने न भू का प्राणी
इस धरती पर बने न कोई—
जीवन का अभिमानी ।

खाओ इससे नयन खुलेगे—
नूतन ज्ञान मिलेगा
नव प्रकाश पाकर अन्तर का—
निर्मल कमल खिलेगा ।

★★★

खुद खा कर फल आदम को भी—
उसने तुरत खिलाया
खाते दोनो के अन्तर मे—
भाव अनोखा आया ।

ज्ञात हुआ निर्वसन पडे है—
नर—नारी इस भू पर
सिकुड गए दोनो अपने मे—
गहन लाज से भर कर ।

ज्ञान नहीं था जिसका अब तक—
जान गए सब क्षण मे
कैसा है आनन्द समाहित—
मन के शुभ मिलन मे ।

अदन—वाटिका से फिर प्रभु ने—
उनको तुरत निकाला
अनायास सात्विक जीवन मे—
आया यह अँधियाला ।

★★★

आदम औ हब्बा से ही यह—
सृष्टि बहुत बढ आई
उनके वशज के ही कारण—
पाप—लहर लहराई ।

प्रभु ने देखा— उसके मानव—
अशुभ कर्म मे रोते
फिर भी सदा लगाते रहते—
पाप—पक मे गोते ।

अच्छा हो यह— सृष्टि मिटे औ —
नयी सृष्टि बन जाए
शुभ कर्मों की ज्योति जग फिर—
नव जीवन लहराए ।

यही सोच कर जल—प्लावन का—
नया विधान जगाया
महाप्रलय का रूप भयकर—
आने स्वय लगा था ॥

६ जल प्लावन

पाप–पुञ्ज जब बढता भू पर–
मानव दुख मे रोता
उसका सचित पुण्य–राग भी–
सपनो–सा ही खोता ।

किसी चीज की जब अति होती–
तभी अन्त भी आता
खिला–खुला सब फूल स्वय ही–
अपना दल बिखराता ।

आदम औ हब्बा के वशज–
भू पर थे उत्पाती
भष्ट विचारो पर पलते थे–
नर–नारी सघाती ।

हिसा–द्वेष–घृणा का भू पर–
फैला था व्यापार
सभी तरह से घृणित हुआ था–
आदम का ससार ।

प्रभु ने सोचा– इसे मिटाकर–
सृष्टि नयी है गढनी
मानव ससृति को है नूतन–
पुण्य–शिखा पर चढनी ।

महाप्रलय आह्वान हुआ फिर–
झर–झर वर्षा आई
जल मे लीन हुई थी सहसा–
भूतल की अरुणाई ।

जल–प्लावन के किन्तु पूर्व ही–
प्रभु ने काम किया था
पास बुलाकर नूहा को ही–
सब सदेश दिया था ।

आदम का वशज था नूहा—
मन से निर्मल पावन
उसक मन म पुण्य–भाव ही—
रहता था मन भावन ।

वही एक था जिसको प्रभु की—
कृपा अहर्निश मिलती
उसके अन्तर मे करुणा की—
सरिता सदा उमडती ।

उसने पा सदेश ईश का—
नव जलयान बनाया
विपुल सृष्टि के सब युग्मा को—
लाकर वहाँ बिठाया ।

बाहर था तम–प्रलय धार पर—
तरणी मे उजियाला
नर–मादा के सकल युग्म का—
प्रभु ही था रखवाला ।

महाप्रलय की उस आँधी मे—
शेष न कुछ बच पाया
महाकाल न सब जीवो को—
अपना ग्रास बनाया ।

जल–प्लावन का रूप भयकर–
दिशा–दिशा तक फैला
भूतल का नभ विमल चँदोवा–
हुआ अचानक मैला ।

बादल के दल घिरे उमड कर–
जैसे कटक प्रलय
तडप–तडप कर बिजली कौंधी–
जैसे काल अभय ।

खुले सकल वातायन नभ से–
पानी लगा बरसने
मूसलधार वेग के आगे–
धरती लगी खिसकने ।

चला पवन उन्चास कि जैसे–
प्रलय केतु फहराए
घन घमण्ड घनघोर निशा का–
दृश्य दिवा मे लाए ।

फूट पडे सब स्रोत धरा के–
टूटी क्यारी–क्यारी
उजड गयी थी सभी तरह से–
धरती की फुलवारी ।

बडे जोर से जल–प्लावन का–
वेग बढा था भू पर
जल की निर्मम धार बही थी–
विटप–श्रृग के ऊपर ।

बडे–बडे वृक्षो की फुनगी–
जल मे डूब गयी थी
काल थपडा के घाता से–
अवनी ऊब गयी थी ।

दिवस और फिर रात्रि चतुर्दश–
तम का जोर बढा था
बडे–बडे पर्वत के सर पर–
प्रलय–प्रवेग चढा था ।

त्राहि–त्राहि थी मची धरा पर–
चीख रहे थे प्राणी
महाकाल के ग्रास बने थे–
भूतल के अभिमानी ।

★★★

धरती के सब जीव मिटे तब–
रूक पाया जल–प्लावन
खुले तभी जलयान नूह के–
भावी क्रम के साधन ।

सभी युग्म जीवो ने देखा–
भूतल गीला–गीला
कही शेष था नही धरा पर–
कोई क्षेत्र कँटीला।

शान्ति वहाँ सर्वत्र व्याप्त थी–
कुछ उद्वेग नही था
पहले जैसा किसी राग का–
अब सवेग नहीं था।

सब युग्मो ने प्रेम–भाव से–
याद किया फिर प्रभु को
महानाश के तम से बाहर–
लाने वाले विभु को॥

७ आरम्भण

जल–प्लावन के बाद धरा पर–
नयी सृष्टि जब आयी
कण–कण पर फिर जाग उठी थी–
जीवन की तरुणाई ।

सभी तरह से सृष्टि नयी थी–
नया–नया था उद्‌भव
पुन लगा भूतल पर होने–
तरह–तरह का उत्सव ।

लोग–बाग सब हिले–मिले थे–
जाग्रत जीवन जीते
याद नही करते थे कोई–
कठिन काल जो बीते ।

नयी विभा थी सब के आगे–
नयी रोशनी जगती
मानव के मन नव विकास की–
नयी भावना पगती ।

जल–प्लावन के बाद धरा पर–
सृष्टि बडी थी सकुल
नर–नारी उद्वेलित जैसे–
दिखते कभी न व्याकुल ।

धीरे–धीरे वृहद् हुआ फिर–
वसुधा का नव जीवन
होने लगे वहाँ भी अनगिन–
भावो के परिरम्भण ।

बढा नया आकार वहाँ फिर–
नव समाज जग आया
दिशा–दिशा मे मानव ने फिर–
अपना पाँव बढाया ।

विस्तृत होने लगी स्वत ही–
भूतल की आबादी
प्रेम–भाव के साथ बढे थ–
वादी औ प्रतिवादी ।

धीरे–धीरे राजतत्र का–
भू पर आया शासन
राजा होने लगा प्रजा का–
स्वामी–ज्ञान–सुअजन ।

राजा की मति–गति पर ही तो–
राज लगा था चलने
प्रजा जनो के हित के ऊपर–
भूपति लगे मचलन ।

पहले था सद्‌भाव हृदय मे–
दृग मे निर्मल करूणा
पुलकित रहती परहित मे ज्या–
भरी–पुरी हो वरूणा ।

किन्तु समय का चक्र चला औ –
मानवता घबडाई
उच्च शिखर से शुभ भावना–
नीचे गिरती आई ।

मानव मे फिर द्वेष बढा औ --
हिसा आई भीषण
व्यक्ति--व्यक्ति मे जागा सहसा--
जीवन का उत्पीडन ।

पुण्य जहाँ थे खिले वहाँ पर--
पाप--तिमिर था जागा
सद्‌भावो--शुभ कर्मों का सब--
वेग हृदय से भागा ।

लेकिन प्रभु ने समय--समय पर--
नर को थे समझाये
उनका ले सदेश नबी औ --
पैगम्बर तक आये ।

सब ने कहा धरा पर नूतन--
पुण्य--केतु फहरेगा
आयेगा वह मनुज--पुत्र जो--
सब का कष्ट हरेगा ।

जब भी हिसा--द्वेष धरा पर--
पाप--ताप बढ जाता
प्रभु का कोई दूत मनुज को--
सच्ची राह बताता ।

भमित हुए थे जन–जन भू पर–
कण–कण था अकुलाया
प्रभु ने ही उस अन्धकार मे–
नूतन दीप जलाया ।

प्रभु ने कहा– नबी के द्वारा–
भू पर एक कुँवारी
जन्म पुत्र को देगी जिससे–
बिहँसेगी भू–क्यारी ।

जो भी घटना घटती उसका–
पहले से क्रम चलता
बहुत दिनो तक पाप ज्वाल मे–
भूतल नहीं तडपता ।

प्रभु की करूणा सब रूपो मे–
देती अपना दर्शन
टिका हुआ है उसी भरासे–
भू पर मानव–जीवन ।

करूणा की जय कहे कि जिससे–
जीवन बनता सुखमय
सकल सृष्टि की ससृति की है–
ये ही निधियाँ अक्षय ।

मानवता है जीवित जिससे—
प्राण—प्राण लहराता
इसकी जय का गीत धरा पर—
सदियों से नर गाता।

कैसे कहाँ उतर कर करुणा—
इस धरती पर आती ?
कोई जान न पाता प्रभु की—
शक्ति कहाँ जग जाती ?

वही जानता करुणामय प्रभु—
जिसको है बतलाते
गहन तिमिर मे ज्योति जगाकर—
वे ही राह दिखाते ॥

८ मरियम

रम्य–सुरम्य पहाडी मे थी–
नाजरेत की घाटी
यहाँ सहज स्वाभाविक–सी थी–
जीने की परिपाटी ।

प्रकृति यहाँ पर बडी सलोनी–
साथ सदा थी रहती
मथर गति से वायु हृदय की–
बात सभी से कहती ।

पर्वत–श्रृंगो पर चढ कर जब–
बाल सूर्य था आता
उसके विमल प्रकाश–सुशोभित–
जीवन–स्वर लहराता ।

दूर–दूर के यायावर के–
पाँव यहाँ रूक जाते
इस घाटी की प्राण–वायु मे–
सब थे जीवन पाते ।

पुण्यवती यह भूमि जहाँ थी–
एक कुँआरी रहती
साथ प्रकृति के रहकर उनसे–
मन की बाते कहती ।

बडी मनोहर रूपवती थी–
नूतन गरिमा वाली
पर्वत की निर्झरणी जैसी–
पुण्य बढानेवाली–

बडी सौम्य–शालीन विनय की–
मानो मूर्त्ति खडी हो
दैवी गुण से दीप्त शिखा मे–
मुक्ता ज्याति जडी हो ।

उसके दृग मे नहीं कहीं था—
किसी तरह का विभम
बडे प्यार से आदर देकर—
कहते थे सब मरियम ।

एक यहूदी दाउद—कुल की—
थी यह निर्मल बाला
इब्राहिम के वश—वृक्ष को—
मिला सुफल—उजियाला ।

माता और पिता थे इसके—
एन्ना औ याआकिम
जिनके मन मे पुण्य—भाव की—
होती थी नित रिमझिम ।

इनके प्रौढावस्था मे ही—
जन्मी थी यह मरियम
प्रभु चिन्तन मे जो रहती थी—
लीन हृदय से हरदम ।

प्रभु का पाकर स्नेह अचानक—
जग से पिछ्ड गयी थी
माता और पिता से छोटे—
वय मे बिछुड गयी थी ।

फिर भी मरियम प्रकृति गोद मे—
बढती आयी निर्भय
सात्विकता से था नित दीपित—
उसका यौवन अक्षय ।

जो भी मिलते उस बाला को—
देते समुचित आदर
उस छोटे कस्बे मे वह थी—
सबसे सुन्दर मनहर ।

उसको भी पर ज्ञात नही था—
क्या सयोग घटेगा
अपना वचन इसी बाला से—
प्रभु भी पूर्ण करेगा ।

अपने ही कौमार्य—रूप मे—
रहती थी शरमाई
दाउद—कुल के यूसुफ से थी—
मँगनी भी हो आई ।

यह विवाह की पूर्व—रीति थी—
परिणय तो था बाकी
किन्तु अचानक धर्म—भाव ने—
किया उसे एकाकी ।

वह पवित्र थी ऊषा जैसी—
पूनम—सी थी पावन
किसी तरह का वहाँ नही था—
किसी कलुष का बन्धन ।

★★★

प्रभु के दूत नबी ने की थी—
यही भविष्यत वाणी
एक कुँआरी गर्भ धरेगी—
बनकर जग कल्याणी ।

मरियम के मन मे यह वाणी —
और उतरने लगती
उसके आनन पर फिर देवी—
दीप्ति उभरने लगती ॥

६ यूसुफ

दाउद के ही वश–वृक्ष मे–
यूसुफ भी थे आते
ये भी प्रतिक्षण धर्म–भाव मे–
रहते थे हर्षाते ।

मन मे सात्विक वृत्ति गहन थी–
कर्मो से थे निर्मल
इनके मन की सदा जागती–
रहती आभा उज्ज्वल ।

धर्म–ग्रथ औ प्रभु–चिंतन म–
लीन सदा मन रहता
प्रभु से हटकर किसी तरह का–
भार न मन था सहता।

परम शान्ति औ शील विनय से–
अपना समय बिताते
जो भी जितना अर्जन होता–
उससे काम चलाते।

किसी तरह का लोभ नहीं था–
और न था उत्पीडन
किसी मोद मे पडकर उनका–
करता हृदय न क्रन्दन।

सुबह ऑख खुलत ही करते–
पहले प्रभु का वन्दन
नित्य कर्म से निवृत्त होकर–
करते श्रम–अभिवादन।

जो भी मिलता काम उसी से–
जीवन यापन करते
किसी तरह का श्रम करने से–
कभी नहीं थे डरते।

पूरी सात्विक निष्ठा मे ही–
हृदय रमाए रहते
श्वास–श्वास मे प्रभु की निर्मल–
ज्योति जगाए रहते ।

★★★

मँगनी तो हो गयी मगर था–
क्रम विवाह का बाकी
इसीलिए मरियम औ यूसुफ–
रहते थे एकाकी ।

दोनो अपना सात्विक जीवन–
रखते सदा सुरक्षित
अपनी गरिमा मे दोनो थे–
धर्म–भाव से मण्डित ।

इसी बीच अब गर्भवती थी–
मरियम अमल कुँआरी
सुनते यूसुफ के तन–मन मे–
जाग उठी चिनगारी ।

तरह–तरह के प्रश्न उठे थे–
कैसे क्या हो सकता ?
यह सवाद बडा दारुणा है–
क्योकर अब खो सकता ?

सोचा मन मे इसे ग्रहण अब—
मै तो नही करूँगा
किसी तरह भी मरियम को मै—
अब तो नही वरूँगा ।

जान रहा मै मरियम कोई—
पाप नहीं कर सकती
पर लोकापवाद के कारण—
वह भी अब डर सकती ।

इसीलिए अच्छा है उसका—
निर्मम त्याग करूँ मै
अपन माथ पर कलक का—
पत्थर नहीं धरूँ मै ।

सोच रहा था यही कि सहसा—
प्रभु का दूत पधारा
सपने मे यूसुफ को उसने—
कस कर जरा पुकारा ।

हे यूसुफ ! दाउद के वशज !
मरियम से मत डर तू,
तेरी पत्नी है वह पावन—
ले आ उसको घर तू !

गर्भ विमल है प्रभु का उसमे—
उससे पुण्य बढेगा
तेज—पुञ्ज वह गहन पाप से—
जग को मुक्त करेगा ।

ईसा रखना नाम भुवन का—
वह उद्धार करेगा
पुण्य—व्रती सात्विक जीवो का—
सब सत्कार करेगा ।

याद किया यूसुफ ने सहसा—
वचन नबी का वैसा
परम्परा से सुनते थे जो—
था वह बिल्कुल ऐसा ।

★★★

मरियम को ले आया यूसुफ—
सादर अपने घर मे
तनिक न कोई भय था उसको—
निर्मल भाव—प्रखर मे ।

हुए सभी सस्कार प्रणय के—
भाव—भक्ति से भर कर
दोनो लगे प्रतीक्षा करने—
दैवी घटना भास्वर ।

दोनो अपने–अपने मे थे–
मन से स्वय समर्पित
नयी भूमिका मे आने को–
दोनो ही थे अर्पित ।

प्रकृति–नटी के नीरव क्षण मे–
दानो थे सुस्ताते
अपने पावन भाव पिरोते–
प्रभु के गीत सुनाते ॥

१० ईसा का जन्म

यूसुफ–मरियम साथ–साथ ही––
खुशियाँ मना रहे थे
दैवी घटनाा की आशा मे–
जीवन बिता रहे थे ।

उसी समय राजाज्ञा आई–
होगी अब जनगणना
नाम लिखाना होगा सबको–
जाकर अपना–अपना ।

नगर बेथलेहम मे ही था—
जन-जन तक को जाना
यूसुफ-मरियम को भी तो था—
नाजरेत से आना।

निकले दम्पति नाजरेत से—
घटा घिरी थी काली
जाडे की ठिठुरन मे फैली—
दिग्-दिग् तक अँधियाली।

वर्षा से घनघोर प्रहर मे—
दोनो बढते जाते
दुर्दिन के उस विकट कष्ट को—
कैसे क्या कह पाते।

सँकरी थी पर्वत की घाटी—
पग-पग मिलते पत्थर
धीरे-धीरे ही बढते थे—
पाँव कँटीले पथ पर।

हवा जोर से चलती तव पग—
डगमग होने लगता
कदम-कदम पर उन दोनो का—
अन्तर रोने लगता।

भीड चली थी साथ मगर वह–
आगे ही बढ आई
अन्धकार मे साथ न देती–
अपनी भी परिछाई।

मरियम के दिन पूरे थे वह–
बहुत व्यथित थी मन से
किसी तरह आगे बढती थी–
अपने बोझिल तन से।

पहुँचे बेथलेहम मे दोनो–
एक गुफा मे ठहरे
पर्वत की घाटी मे आकर–
कष्टो से कुछ उबरे।

पर्वत–शृगो के दर्रो मे–
पशु–धन बॉधे जाते
चरवाहे भी वही पहुँच कर–
अपना दिवस बिताते।

किन्तु रात का समय वहाँ पर–
कौन दिखाई देता ?
वर्षा मे फिर चलने का भी–
कोई कष्ट न लेता।

मरियम व्यग्र बहुत थी मन से—
प्रसव काल था आया
अनायास उसके नयनो मे—
नव—प्रकाश—सा छाया ।

सँकरे औ सर्पीले पथ पर—
फिसलन जमी हुई थी
इसीलिए इस ओर पथिक की—
काफी कमी हुई थी ।

मध्य रात्रि का पुण्य प्रहर था—
वर्षा रूकी हुई थी
बाहर बैठे यूसुफ की भी—
ऑख झुकी हुइ थी ।

खिला—खुला दिखता था अम्बर—
झॉक रहे थे तारे
जन्म दिया मरियम ने शिशु को—
भू पर वही किनारे ।

छोटी थी वह गुफा मगर कुछ—
चरनी—पात्र भरे थे
जिनमे पशुओ के चरने के—
दाने—घास धरे थे ।

किसी तरह नवजात सुवन को—
वस्त्रो मे लिपटाए
लिटा दिया चरनी मे लाकर—
मन ही मन हर्षाए ।

शान्त प्रकृति के नीरव क्षण मे—
दैवी घटना आई
बिना किसी उत्सव के भू पर—
विमल लहर लहराई ।

★★★

वहीं पास के गॉवो मे थे—
कुछ चरवाहे सोए
दिन के श्रम से थके हुए सब—
सपनो मे थे खोए ।

सहसा उनके दृग के आगे—
सपना—सा कुछ छाया
प्रभु का कोई दूत अचानक—
उनके सम्मुख आया ।

स्वर्ग—दूत ने कहा कि देखो—
जन्म मुक्ति—दाता का
यहीं हुआ है जन्म अभी ही—
मानव—परित्राता का ।

वस्त्र ढँका चरनी मे सोया—
बालक तुम्हे मिलेगा
प्रभु का है वह पुत्र जगत मे—
सब का त्राण हरेगा।

गॉव—गॉव के चरवाहे सब—
सुनकर निकले घर से
चढे पहाडी तक सब आए—
अपनी डगर—डगर से।

यह सकेत समझते उनको—
देर नहीं लग पाई
देख वहाँ चरनी मे शिशु को—
सबने विनय सुनाई।

जय—जय धरती के सुखदाता—
जीवन—मुक्ति—प्रदाता
ह प्रभु—पुत्र। तुम्हारे आगे—
मानव शीश झुकाता।

११ पुच्छल तारा

प्रभु के विमल रूप से निसृत—
　　करुणा भू पर बहती
सबके लिए धरा पर जैसे—
　　रश्मि उषा की हँसती ।

जो जितना नीचे है उसको—
　　उतना ऊँचा करता
तिमिर–शीश पर ज्योति–बिम्ब ज्यों—
　　अपना पग है धरता ।

प्रभु का सब है क्षेत्र वहाँ पर—
सब कुछ सम्भव होता
पलभर मे हँसने लगता नर—
आता है जो रोता ।

दीन दुखी पर प्रभु की करुणा—
सदा बरसती रहती
बन्धन मे जो जीते उनको—
मुक्ति दिलाया करती ।

यह भी है सयोग कि प्रभु को—
पहले उसने देखा
जो जन थे चरवाहे भू की—
सब से अतिम रेखा ।

★★★

फूल जहाँ खिलते हैं मादक—
सुरभि बिखरने लगती
उषा व्योम में आती है जब—
सब की आँखे जगती ।

प्रभु ने जन्म लिया तो सुख से—
भूतल तक लहराया
पूरब के नभ मे था सहसा—
पुच्छल तारा आया ।

यह था वह संकेत कि भू पर–
आया है जग–त्राता
दीन–हीन मानवता के हित–
जीवन का सुख–दाता ।

देखा जब ज्योतिषियों ने तब–
समझ गए यह क्या है
जान गए यह दैवी कारण–
शुभ भविष्यत् का है ।

इसीलिए संकेत प्राप्त कर–
तारे के संग आए
हिरोदेस थे नृपति उन्हीं को–
यह सन्देश सुनाए ।

कहा उन्होंने– नया नृपति अब–
इस भूतल पर आया
स्वर्ग–दूत ने खुद ही आकर–
यह सब है बतलाया ।

हिरोदेस घबड़ाए लेकिन–
बाहर से हो शंकित
कहा– हम कुछ ज्ञात नहीं है–
हम हैं इससे वंचित ।

जिससे है सकेत मिला तुम—
साथ उसी के जाओ
जन्म कहॉ पर हुआ स्वय ही—
जाकर पता लगाओ ।

और पुन आकर कह जाना—
हम भी तो देखेगे
पुण्य—पुरुष सवत्सर का है—
समुचित आदर देगे ।

★★★

तारे के सग सभी ज्योतिषी—
पर्वत क पथ साध
रुके वहॉ उस ठौर जहॉ पर—
तारो ने पग बॉधे ।

जहॉ रुका था पुच्छल तारा—
वही जगह थी पावन
बिहॅस रहा था वहीं अकेला—
मरियम—सुत मनभावन ।

दण्ड—प्रणाम किया था सब ने—
मन से आदर देकर
याद पडी फिर बात पुरानी—
पैगम्बर की मनहर ।

हुए सभी जन प्रमुदित मन से—
राग नया लहराया
बिछुडा पावन गीत अधर का—
आज स्वय जग आया।

प्रभु का वदन करके सब ने—
बडी तृप्ति थी पाई
बहुत दिनो पर वायु बिहँसती—
आई थी पुरवाइ ॥

★★★

ज्योतिषि–गण जब चले गए तब–
यूसुफ ने था देखा
स्वर्ग–दूत थे सम्मुख उसके–
उसने सहज परेखा।

बोले प्रभु के दूत कि यूसुफ–
मिस्र देश मे जाओ
जब तक कहूँ नहीं तुम तब तक–
वापस कभी न आओ।

हिरोदेस है क्रूर चाहता–
बालक को मरवाना
ढूढ रहा है देव–पुत्र को–
वह पापी दीवाना।

मरियम औ इस शिशु को लेकर–
जल्दी ही तुम जाओ
विकट घडी है यहॉ न पलभर–
रहकर समय गँवाओ।

यूसुफ झटपट उठा और फिर–
मॉ–बच्चे को लेकर
मिस्र देश मे आया चलकर–
किसी तरह से सत्वर।

हिरोदेस के मरण–काल तक–
बना रहा यह आश्रय
तीनो जन अब सुख से रहते–
होकर जग से निर्भय।

★★★

हिरोदेस नृप के अन्तर मे–
था कुचक्र कुछ जागा
शुभ कर्मो के सभी भाव को–
उसने मन से त्यागा।

ज्योतिषि–गण जब नहीं वहाँ पर–
पुन लौट कर आए
तब उसकी ऑखो के आगे–
पापो के घन छाए।

सोचा– मेरा वध करने को–
प्रभु–पुत्र है आया
जनमा है वह यहीं कहीं पर–
सबने है बतलाया।

लेकिन वह क्या ? मै ही उसकी–
हत्या तुरत करूँगा
विष की इस लत्तर को आगे–
बढने कभी न दूँगा।

फिर सोचा– जाने वह बालक–
कब है भू पर आया
समय जन्म का नहीं किसी ने–
सही–सही बतलाया।

सम्भव है कुछ वर्ष पूर्व ही–
वह जन्मा हो भू पर
आज खोजने आए हो सब–
थोडा समय बिताकर।

यही सोचकर उस निर्दय ने–
निर्घिन चाल चलाई
दो वर्षो के सब बच्चो की–
हत्या वहॉ कराई।

हिरोदेस ने पूर्ण राज्य मे–
यह कुकर्म करवाया
सब अबोध सुवनो को उसने–
नाहक ही मरवाया।

घडा पाप का भरता है तब–
भरता ही नित जाता
पाप–कर्म मे लीन मनुज तो–
कभी नहीं पछताता।

इसी तरह नृप हिरोदेस भी—
सदा डूबते आया
जो कुछ भी सत्कर्म किया था—
सब को स्वत डुबाया ।

नबी पहले ही बोल गए थे—
वही बात हो आयी
रोदन—क्रन्दन की घर—घर से—
चीख उठी अकुलाई ।

इसी तरह था समय बीतता—
दुख के बादल बरसे
हिरोदेस की मृत्यु हुई तब—
जन—जन के मन हरसे ।

★★★

प्रभु के दूत मिस्र मे आए—
यूसुफ के ही सम्मुख
सपने—सपने मे ही बोले—
होकर उसके अभिमुख ।

उठो करो प्रस्थान यहाँ से—
समय सुहावन आया
हिरोदेस पापी ने अपना—
सब कुछ स्वय गँवाया ।

यूसुफ चले गलील देश मे—
सुनकर प्रभु की वाणी
साथ—साथ था ईश—पुत्र औ —
मरियम थी कल्याणी ।

नसरत मे वह बसा हुई सच—
बात नबी की भू पर
लोग पुकारेगे उसको ही—
यहाँ नासरी कहकर ।

१३ दैवी प्रकाश

बचपन से ही इस बालक मे—
शुभ प्रकाश था दिखता
लगता जैसे भाग्य—विभव सब—
प्राणी का यह लिखता ।

शान्त भाव से प्रकृति—गोद मे—
अपना समय बिताता
कोई भी उद्वेग हृदय म—
देख न क्षणभर पाता ।

परम–शान्त सागर–सा अपने–
दिव्य रूप मे लगता
बाल–सुलभ उस नव स्वरूप से–
भाव अलौकिक जगता ।

नाम–करण औ शुद्धि–करण की–
हुई रीति सब पूरी
जो भी पहले कहा नबी ने–
उसे मिली मजूरी ।

मन्दिर मे वह बैठ शान्ति से–
ध्यान लगाया करता
परम पिता परमेश्वर का गुण–
प्रतिपल गाया करता ।

एक दिवस सब नसरत वासी–
निकले पर्व मनाने
बडी भीड थी चलते थे सब–
अपने मे अनजाने ।

यूसुफ मरियम औ ईसा भी–
साथ–साथ थे जाते
बडी दूर की यात्रा थी सब–
रूक–रूककर सुस्ताते ।

चलते–चलते भोर हुई तब–
देखा सब ने पल मे
बालक ईसा साथ नहीं था–
उन लोगो के दल मे ।

लगता बिछुडा कही राह मे–
लोग–बाग घबडाए
यूसुफ–मरियम उसे खोजते–
एक गॉव मे आए ।

देखा मदिर मे ईसा को–
प्रभु के गीत सुनाते
बालक था पर लोग उसी के–
आगे शीश नवाते ।

इसे देख आश्चर्य–चकित थे–
है कैसा अभ्यासी
ठगे–ठगे से रहे देखते–
नसरत के सब वासी ।

एक भाव मे लीन ह्रदय से–
निष्ठा पूर्वक गाता
प्रभु का राज्य यहॉ आना है–
सबको ही समझाता ।

ईसा की वाणी म सबको–
मिलती शक्ति अलौकिक
तिलभर भी था नहीं हृदय मे–
लोभ–मोह–गुण भौतिक।

इन तत्वो से ऊपर उठकर–
सात्विकता मे रहता
प्रतिपल–प्रतिक्षण प्रभु के यश की–
बात सब से कहता।

जो भी जिसको कहता उसकी–
बात न काटी जाती
सत्य सिद्ध होकर ही उसकी–
वाणी यश फैलाती।

जो भी रोगी दिखता उसको–
छू कर चगा करता
बडे प्रेम से सब लोगो मे–
रहता सदा विचरता।

★★★

कुछ दिन मे ही यूसुफ उससे–
बिछुडे हुए दिवगत
लेकिन ईसा नही हुए थे–
किसी तरह भी आहत।

उसी गॉव मे बढइ गिरी का–
काम रहे नित करते
निश्छल मन से सेवा–व्रत ले–
जन–जन का दुखा हरते ।

कहते सब से केवल प्रभु को–
सत्य जगत मे जानो
उसका ही साम्राज्य रहेगा–
समय–काल पहचानो ।

आएगा प्रभु राह उसी की–
मै हूँ मात्र सजाता
प्रभु का राज्य प्रतिष्ठित होगा–
सबको ही बतलाता ।

प्रभु के यश–कीर्त्तन मे वह–
लीन सदा रहता था
निर्मल मन से प्रभु की बाते–
जन–जन से कहता था ।

१४ ईसा का वपतिस्मा

वहीं एक यूहन्ना थे जो—
सात्विक शिक्षा देते थे
धार्मिक औ जिज्ञासु—जनो की—
शुद्ध परीक्षा लेते थे ।

तन—मन से नित निर्मल रहते—
सब को प्यार किया करते
प्रभु के पथ पर चलने को ही—
शुभ उपदेश दिया करते ।

सब से कहते— हृदय फिराओ—
राजा आनेवाला है
इस निशीथ के गहन तिमिर मे—
ज्योति जगाने वाला है।

मार्ग सजाओ देर नही है—
उस भूपति के आने मे
दूर सभी के सकट होगे—
उस पर ध्यान लगाने मे।

ऊँटो के रोओ का केवल—
वह परिधान पहनता था
चमडे का कटिबन्ध कमर मे—
बॉधे हरदम रहता था।

टिड्डी औ वनमधु ही केवल—
उसके थे आहार रहे
प्रभु का राज्य तुरत आएगा—
कहते बारम्बर रहे।

बडे शान्त–निष्पक्ष भाव से—
मन की बात सुनाता था
सहज और निर्दोष भाव से—
सच्ची बात बताता था।

भावी घटना की रेखा भी—
कभी—कभी दे देता था
सहज ढग से वह एकाकी—
अपनी नैया खेता था ।

कुछ शास्त्री औ कुछ फरीसियो—
पास वहाँ पर आते थे
अपने मतलब की बातो को—
छल से वहाँ छिपाते थे ।

पर यूहन्ना उनके छल की—
बात प्रकट कर देते थे
सच्ची बात बताने मे वे—
समय न कुछ भी लेते थे ।

शास्त्री—जन औ फरीसिया ही—
उस कस्बे के मानी थे
आगे चल कर ईसा के भी—
शत्रु बने मनमानी थे ।

एक दिवस यूहन्ना ने ही—
इन सब को फटकारा था
अरे सॉप— कहकर ही उनको—
डॉटा औ ललकारा था ।

ये भी दिक्षा लेने को ही—
पास वहॉ पर आए थे
लेकिन अपने कुटिल भाव के—
कारण कुछ भरमाए थे ।

इन्हे देख यूहन्ना बोले—
ऑधी आनेवाली है
व्यर्थ—निरर्थक पडी लकडियॉ—
अब सब जलनेवाली है ।

शिखा ज्योति की लेकर कर मे—
देखो कोई आता है
चेत सको तो चेतो पगले—
सब को ही समझाता है ।

कहा— सॉप के बच्चो जागो—
सब कुछ मिलनेवाला है
मुझसे भी सामर्थ्यवान तो—
आगे आनेवाला है ।

इसी तरह की बाते सबसे—
यूहन्ना नित कहते थे
परम—भाव मे लीन हृदय से—
सब दिन घूमा करते थे ।

★★★

एक दिवस यरदन के तट पर--
इसा भी आ जाते है
देख वहॉ यूहन्ना को वे--
मस्तक तनिक झुकाते है ।

यूहन्ना तब उन्हे रोक कर--
बोले-- इसका काम नही
सच कहता हूँ ईसा तुमसे--
आगे कुछ अभिराम नहीं ।

ईसा बोला-- आया हूँ मै--
बपतिस्मा ही लेने को
जो कुछ भी मेरा है सब कुछ--
चरणो पर धर देने को ।

बोले तब यूहन्ना तुझसे--
मै लूँ यही जरूरी है
मुझस बपतिस्मा लेने की--
तेरी क्या मजबूरी है ?

ईसा बोले-- अभी यहॉ पर--
लगता मुझको ठीक यही
करूँ पूण धार्मिकता सारी--
होगा सब से नीक यही ।

बात मानकर यूहन्ना ने—
जल मे पूर्ण विधान किया
ईसा को फिर हृदय लगाकर—
सभी तरह सम्मान दिया।

वपतिस्मा लेकर जब ईसा—
जल से बाहर आते थे
खुला–खिला आकाश बिहँस कर—
दृश्य नये दिखलाते थे।

नव कपोत–सी प्रभु की आत्मा—
ईसा पर मँडराती थी
नभ से उतरी वाणी मधुमय—
सबको ही समझाती थी।

मेरा पुत्र यही अतिप्रिय है—
इस पर रहा प्रसन्न सदा
कार्य सभी यह पूर्ण करेगा—
यह है भू पर धन्य सदा।

★★★

शान्त भाव से ईसा ने तब—
प्रभु को विनय–प्रणाम किया
अन्धकार मे ज्योति जगाने—
का ही व्रत निष्काम लिया।

करुणा की वह मूर्ति अहर्निश—
नयी प्रभा फैलाती थी
प्रभु का राज्य धरा पर आए—
निर्मल राह बनाती थी ॥

१५ ईसा की परीक्षा

ईसा के हर काम धरा पर—
दैवी पुण्य विधान बने
दिव्य शक्ति–सम्पन्न हुए वे—
दुनिया से अनजान बने ।

प्रभु की जब लीला चलती तब—
कुटिल ग्रह भी जगते है
बढ़ते हुए मनुज के पग को—
वही रोकने लगते है ।

ईसा के सम्मुख भी कितने—
विघ्न व्याल जग आए थे
आकर वह शैतान रूप मे—
लालच खूब दिखाए थे।

एक बार ईसा ने अपने—
मन से था उपवास किया
चालिस दिन औ रात उन्होने—
भोजन—जल तक त्याग दिया।

तभी वहॉ शैतान पधारा—
बोला— जगल मे जाओ
देखो जो घटना घटती है—
मुझ से तुम मत घबडाओ।

ईसा बोले— कभी नहीं मैं—
तिलभर भी हूँ घबडाता
चलो वहीं चलकर देखूँगा—
कौन कहॉ से क्या लाता ?

जगल मे दुष्टात्मा बोली—
प्रभु के पुत्र बताओ तो
भूख लगी क्या ? पत्थर को ही—
रोटी तनिक बनाओ तो।

ईसा बोले– रोटी से ही–
मनुज न जीवित रहता है
जीवन का तो आश्रय केवल–
जो कुछ भी प्रभु कहता है।

मन्दिर के फिर उच्च शिखर पर–
ईसा को ले आया था
तरह–तरह के रूप दिखाकर–
उनको कुछ भरमाया था।

बोला– प्रभु के पुत्र गिरो तुम–
देखो कौन बचाता है ?
स्वर्ग–लोक का दूत तुम्हे क्या–
हाथो–हाथ उठाता है ?

ईसा बोले– अपने ऊपर–
आफत आने मत देना
शक्ति–रूप परमेश्वर की तू–
कभी परीक्षा मत लेना।

तुम हो पापी शक्ति तुम्हारी–
क्षीण तुरत हो जाएगी
सच कहता हूँ आँख तुम्हारी–
देख न कुछ भी पाएगी।

फिर वह एक शिखर पर आया–
ईसा को भी साथ लिए
सकल सृष्टि का राज्य और सब–
वैभव अपने हाथ लिए।

बोला– ईसा करो दण्डवत–
सब कुछ तुम को दे दूँगा
सच कहता हूँ, सब सम्पति का–
राजा तुम्हे बनाऊँगा।

ईसा बोले– हट जा पापी–
बात न तेरी मानूँगा
तू है हीन–वृत्ति का पोषक–
सदा यही मै जानूँगा।

चाहे जो भी कर शैतानी–
प्रभु का ही गुण गाऊँगा
प्रभु को छोड किसी के आगे–
मस्तक नही झुकाऊँगा।

यह सुनकर शैतानन वहाँ से–
जान बचाकर भागा था
गिरकर ईसा के चरणो पर–
अपना सब कुछ त्याग था।

स्वर्ग–दूत फिर आए आकर–
ईसा का सत्कार किया
देव–लोक की शक्ति–सम्पदा–
का नूतन उपहार दिया ॥

१६ उपदेश का आरम्भ

ईसा मे है देव–शक्ति यह–
लोग–बाग थे जान रहे
उनके छोटे वय से ही सब–
उनको थे पहचान रहे ।

किन्तु समय के साथ हृदय की–
विभुता बढती आई थी
प्रात–किरण के लिए धरा पर–
छाई नयी लुनाई थी ।

समय–काल ईसा के सम्मुख–
वैसा ही अब आया था
सौरभ करे सुगधित भू को–
सुमन स्वय अकुलाया था।

ईसा ने था सुना यूहन्ना–
कारावास बिताते हैं
धर्म सुरक्षित रखने को ही–
भीषण कष्ट उठाते हैं।

और नहीं था कोई जिस पर–
जन–जन सब विश्वास करे
अपने वचनामृत से जो नर–
तम मे नया प्रकाश करे।

यही सोच ईसा फिर झटपट–
खुद गलील मे आए थे
शिष्य बना मछुआरो को ही–
प्रभु के वचन सुनाए थे।

जैसे ईसा यहाँ पधारे–
नव सुगध लहराई थी
अन्धकार निबिड क्षेत्र मे–
विभा नयी मुस्काई थी।

गैर–यहूदी–जन–मानस को–
उसने तुरत सचेत किया
प्रभु का राज्य निकट है जानो–
सब को ही उपदेश दिया ।

वहीं झील पर एक किनारे–
दो मछुआरे रहते थे
अन्द्रियास औ परतस जिनको–
लोग वहाँ के कहते थे ।

ईसा बोले मछुआरा मै–
नर का तुम्हे बनाऊँगा
भटक रहे हो सब अनजाने–
सच्ची राह बताऊँगा ।

और वहीं दो अन्य जनो को–
उसने शिष्य बनाया था
जो भी साथ लगे थे उनको–
प्रभु का मार्ग दिखाया था ।

धीरे–धीरे दूर–दूर तक–
चचा पडी सुनाई थी
लोगो की फिर भीड वहाँ पर–
स्वय उमडती आई थी ।

ईसा भी हर ओर वहाँ पर—
निर्भय घूमा करते थे
दीन—दरिद्र—दुखी लोगो को—
प्रभु की बाते कहते थे ।

जो भी रूग्ण—व्यथित आते थे—
चगे होकर जाते थे
प्रभु का है साम्राज्य निकट ही—
सब को यही बताते थे ।

मदिर औ आराधन—गृह मे—
नित उपदेश दिया करते
प्रभु के शुभ समाचार का ही—
वर्णन सदा किया करते ।

जिनको जो बीमारी रहती—
तुरत निवारण करते थे
जन—जन की सब दुर्बलता को—
क्षण मे ही वे हरते थे ।

ईसा के शिष्यो की सख्या—
प्रतिदिन बढती आई थी
उनकी अमृत—वाणी सुनने—
को जनता अकुलाती थी ।

जहाँ–जहाँ जाते थे सम्मुख–
भीड उमड कर आती थी
शान्त सिन्धु मे जैसे कोई–
लहर नयी आ जाती थी।

यही सभी से कहते थे वे–
अपने मन को स्वच्छ करो
अनाचार उत्पीडन त्यागो–
परम शान्ति का पक्ष धरो।

प्रभु का राज्य निकट है जो भी–
मन को अमल बनाएगा
प्रभु का विमल प्रकाश हृदय पर–
वहीं उतर कर आएगा॥

१७ धन्य वचन

भीड देख कर ईसा सहसा–
पर्वत पर चढ आए
और वहीं अपने शिष्यो को–
अमृत–वचन सुनाए !

कहा– धन्य है वे जो मन से–
दीन–हीन से रहते
राज्य स्वर्ग का उनका ही है–
ऐसा ही प्रभु कहते !

धन्य सदा वे शोक–ग्रस्त जो–
जग मे समय बिताते
सान्त्वना तो ऐसे ही नर–
भूतल पर है पाते ।

धन्य वही जो नम्र बने से–
सहते सकट भारी
निकट भविष्यत् मे वे होगे–
पृथ्वी के अधिकारी ।

धन्य वही जो क्षुधा–ग्रस्त है–
धर्म–हेतु ही प्यासा
ऐसे ही जन की दुनिया मे–
पूरी होगी आशा ।

धन्य वही जो दयावन्त हैं–
करुणा सब पर करते
ऐसे जन ही दया सभी की–
हरदम पाते रहते ।

धन्य वही जो निर्मल मन है–
छल से दूर किनारे
देख रहा परमेश्वर वे है–
उसके बडे दुलारे ।

धन्य वही जो जन-जन मे नित—
मेल बढाया करते
ऐसे जन ही परम पिता के—
पुत्र कहाया करते ।

धन्य वही जो धर्म-मार्ग पर—
यहाँ सताए जाते
ऐसे ही जन राज्य स्वर्ग का—
सब से पहले पाते ।

तुम सब भी हो धन्य कि मेरी—
खातिर निन्दा सहते
सब कुछ सहकर भी अन्तर को—
शुद्ध बनाए रहते ।

झूठ-मूठ आरोप लगा जन—
जितना दुःख सताए
तुम आनन्द मनाओ मन मे—
चाहे जो भी आए ।

क्योंकि तुम्हारा प्रतिफल तुमको—
सदा मिलेगा पावन ।
तुम से पहले भी नबियों ने—
यही सहा था उस क्षण ।

★★★

तुम हो लवण जगत को जिसकी—
सब दिन चाह रहेगी
तुम्हे स्वाद के लिए जुगोएँ—
यह परवाह रहेगी।

स्वाद नष्ट होने पर कोई—
कभी नहीं पूछेगा
तुरत उठाकर घर के बाहर—
फेक उसे सब देगा।

इसीलिए तुम हर क्षण प्रभु की—
याद जगाए रक्खो
उसकी इच्छा सदा पूर्ण हो—
भाव बनाए रक्खो।

★★★

तुम हो ज्योति तिमिर को अपने—
पास न आने देना
सहज भाव से सब कष्टो को—
अपने पर सह लेना।

अपना सहज स्वभाव नहीं तुम—
कभी भूल कर त्यागो
किसी विपद को देख कभी तुम—
कायर से मत भागो।

तेरे कामो से ही प्रभु की—
महिमा सदा बढेगी
तुम्हीं ज्योति उज्ज्वलतम जिसमे—
दुनिया सदा चलेगी।

★★★

मत समझो मैं नयी व्यवस्था—
करने को हूँ आया
नबियो के उपदेशो को भी—
मैंने नहीं मिटाया।

मैं तो उनके कथनो को ही—
पूर्ण रूप हूँ देता
डूब न जाओ बीच भँवर मे—
नाव इसी से खेता।

सच कहता हूँ कभी किसी की—
हत्या तुम मत करना
क्रोध न करना कभी किसी पर—
सबसे मिल कर रहना।

करना मत व्यभिचार किसी पर—
बुरी दृष्टि मत लाना
अपनी कामुकता से तम के—
पथ पर कभी न जाना।

एक नेत्र जो पाप करे तो—
उसको तुरत निकालो
एक हाथ जो पाप करे तो—
उसे काट ही डालो ।

जन—जन से तुम मधुर प्यार का—
निर्मल नाता जोडो,
पापाचारिणि अगर नहीं तो—
पत्नी को मत छोडो ।

जिसे तलाक मिला हो उससे—
कभी न शादी करना
बडी नीचता है ऐसी को—
साथ कभी भी रखना ।

★★★

नबियो ने है कहा कि झूठी—
शपथ कभी मत लेना
प्रभु की कही सभी बातो को—
तुम पूरा कर देना ।

मे कहता हूँ कभी स्वर्ग की—
शपथ न खाना भू पर
क्योकि हर क्षण वहीं हमारा—
रहता है परमेश्वर ।

धरती की भी शपथ न खाना—
वह है उसका आसन
और न येरूशेलम की है—
वहाँ उसी का शासन।

कभी भूलकर अपने सिर की—
शपथ न तुम सब खाना
सम्भव कभी न एक बाल भी—
श्यामल—श्वेत बनाना।

एक गाल पर कोई मारे—
तुरत दूसरा दे दो
कुरता कोई माँगे तो तुम—
उसे कोट भी दे दो।

प्यार पडोसी वैर शत्रु से—
करना तुम्हे बताया
सब से ही पर प्यार करो तुम—
मैने है बतलाया।

जो भी तुम्हे सताएँ करना—
उनके हित भी वदन
प्रभु की कृपा सभी प्राणी पर—
होती रहती हर क्षण।

जब भी सूर्य गगन मे खिलता—
सब प्रकाश है पाते
धर्मी और विधर्मी सब पर—
पभु है दया दिखाते।

तुम हो प्रभु के प्यारे तुम पर—
सब की ही है आशा
पूर्ण तुम्हीं कर सकते केवल—
भूतल की अभिलाषा

सिद्ध बनो तुम वैसे जैसे—
सिद्ध स्वय परमेश्वर
दीप्त सदा रहता है भू पर—
उनका आनन भास्वर।

शुद्ध–बुद्ध औ सजग हृदय से—
परम शक्ति तुम पाओ
परम पिता की सब वाणी को—
मन से तुम अपनाओ ॥

१८ प्रच्छन्न उपकार

ईसा नित शिष्यो से कहते—
जीवन शुद्ध बिताओ
अपने कर्मों को प्रचार का—
साधन नहीं बनाओ !

दान करो पर ऐसा कोई—
तनिक नहीं पहचाने
दायाँ हाथ कहाँ क्या देता—
बाँया हाथ न जाने !

गुप्त रूप से जो भी दोगे—
ईश्वर प्रतिफल देगा
धरती पर भी राज्य स्वर्ग का—
प्रभु ही केवल देगा।

करो प्रार्थना प्रभु की लेकिन—
पाखण्डों से बचकर
कभी आवरण मत आने दो—
अन्तर–तर के सच पर।

जाकर अपने शून्य कक्ष में—
प्रभु को सदा पुकारो
गुप्त रूप से उसके सम्मुख—
अपना तन–मन वारो।

यही प्रार्थना करना— प्रभु का—
राज्य शीघ्र ही आए
उसका नाम धरा पर सबसे—
पावन तम बन जाए।

पूरी होती रहे भुवन में—
केवल प्रभु की इच्छा
हमें बचाते रहे पाप से—
ले पर नहीं परीक्षा।

मुझसे जो अपराध करे मै—
क्षमा उन्हे कर दूँगा
प्रभु से अपने पापो का भी—
क्षमा-दान मे लूँगा !

ऐसा हो उपवास कि कोई—
जान नही कुछ पाए
किसी तरह की खिन्न उदासी—
आनन पर ना आए !

अपने हित मत करो धरा पर—
तनिक न धन का सचय
चोर चुराकर ले जाएँगे—
नहीं रहेगा अक्षय !

निर्मल रक्खो ऑख वही है—
इस शरीर का दीपक
अन्तर-तर के भावो का है—
वह निर्द्वन्द्व प्रकाशक !

बुरी नजर जो हुई तुम्हारी—
जीवन दुखमय होगा
नहीं देख कुछ पाओगे सब—
अन्धकारमय होगा !

एक साथ दो स्वामी की तो—
सेवा कभी न चलती
धन—दौलत औ परमेश्वर की—
साथ नहीं बन सकती ।

दोनो मे से किसी एक को—
चुनना होगा भू पर
तुम्हे छोडना होगा इनमे—
किसी एक को सत्वर ।

मत सोचो तुम अपनी खातिर—
कैसे कल क्या होगा ?
क्या खाओगे क्या पहनोगे—
क्या बच्चो का होगा ?

जिसने जन्म दिया है उसको—
तेरी चिन्ता पूरी
उससे ही सम्बन्ध बढाओ—
दूर करो सब दूरी ।

देखो नभ के पछी—गण को—
बीज न वे कुछ बोते
खेत और खलिहान न उनको—
फिर भी सुख से सोते ।

परम पिता परमेश्वर उनको—
प्रतिदिन देता भोजन
सब के सकट का वह केवल—
करता सदा निवारण ।

मत सोचो कल कैसा होगा—
फूलो के दल देखो
छिटक रही जो अम्बर मे वह—
ऊषा कज्जल देखो ।

तुम हो मानव पशु—पक्षी या—
जड—जीवन से ऊपर
कभी न वे सब कर सकते है—
तेरी समता तिलभर ।

कल की कोई बात न सोचो—
सागर जल भर लेगा
यही सत्य है कल की चिन्ता—
कल अपने कर लेगा ॥

१६ साधना की तीव्रता

ईसा अपने शिष्यो को नित—
शिक्षा देते रहते
नए—नए दृष्टान्तो द्वारा—
सब समझाया करते ।

कहते अपने शिष्यो को मत—
दोष किसी मे देखो
केवल अपने कर्त्तव्यो को—
तुम सब सदा परेखो ।

तुम देखोगे तो तुम मे भी—
अनगिन दोष मिलेगे
कीचड मे पत्थर फेको तो—
अपने दाग लगेगे।

इसीलिए तो दोषारोपण—
नहीं किसी पर करना
दोष—ग्रस्त होने से केवल—
प्रतिपल डरते रहना।

मत सोचो है कहीं किसी के—
दृग मे कोई तिनका
अपने दृग मे जो लटठा है—
ध्यान धरो बस उनका।

जिस फिते से नापोगे तुम—
औरों को इस भू पर
वही माप सब लोग धरेगे—
यहाँ तुम्हारे ऊपर।

इसीलिए है सत्य कि केवल—
अपने अन्दर झाँको
जैसी त्रुटि है अपनेपन मे—
इसको ही बस आँको।

माँगो केवल परमेश्वर से—
सब कुछ ही वह देगा
भार तुम्हारे सब जीवन का—
अपने पर वह लेगा।

जिसने जो भी माँगा उसको—
उससे ही सब मिलता
पत्थर भी उसकी करुणा से—
अपने आप पिघलता।

कौन पिता रोटी माँगे पर—
सुत को देता पत्थर
फिर क्या तेरी हृदय-याचना—
नहीं सुनेगा ईश्वर ?

किसको कैसी कहाँ जरूरत—
सब वह जान रहा है
किस मे कैसा भाव निहित है—
सब पहचान रहा है।

चलने दो बस उसकी इच्छा—
अपनी बात न लाओ
तब फिर सच्ची राह मिलेगी—
धर्म-भाव अपनाओ।

★★★

जब ईसा पर्वत से उतरे—
भीड उमड कर आई
एक कुष्ट-रोगी ने उनको—
अपनी विनय सुनाई।

हे प्रभु यदि तू चाहे तो मै—
शुद्ध तुरत हो सकता
इस शरीर का रोग पुराना—
क्षणभर मे खो सकता।

ईसा बोले— चाह रहा मैं—
शुद्ध तुरत हो जाओ
किन्तु किसी से इस घटना की—
बाते नहीं बताओ।

शुद्ध हुआ वह रोगी तत्क्षण—
और बहुत हर्षाया
ईसा के पद-पद्मो मे फिर—
अपना शीष नवाया।

★★★

आया सूबेदार कि जिसका—
सेवक वहाँ पड़ा था
पक्षाघात रोग से पीड़ित—
अपने मे जकड़ा था।

सुनकर ईसा– वचन तुरत वह–
रोग–मुक्त हो आया
उसने भी ईसा के यश का–
सब को गीत सुनाया ।

जो भी रोगी आते क्षण मे–
चगे होकर जाते
दिशा–दिशा मे जा–जाकर सब–
उसकी ख्याति बढाते ।

कब्रो की दुष्टात्माएँ थीं–
सब को वहाँ सताती
उनका भी उद्धार हुआ वे–
गयी स्वय हर्षाती ।

वहीं किसी मदिर का कोई–
एक पुजारी आया
उसकी पुत्री मरी हुई थी–
रो–रो हाल बताया ।

जाकर उसके घर पर ईसा–
बोले–बाला जागो
देखो लोग खडे है अपनी–
निद्रा को तुम त्यागो ।

सुनकर बाला उठ बैठी थी—
        सब ने मोद मनाया
सब ने कहा मसीहा मेरा—
        इस धरती पर आया !

इसी तरह ईसा के यश की—
        फहरी विमल पताका
मिटने लगा धरा से मानो—
        पल–पल जोर अमा का !!

२० जन कल्याण

ईसा सब को कहते थे नित—
प्रभु पर ध्यान लगाओ
रहे न कोई दुख का मारा—
ऐसी सृष्टि बनाओ ।

जहाँ कहीं भी दुखिया मिलता—
त्राण उसे खुद देते
रोग-ग्रस्त हर प्राणी का सब—
संकट थे हर लेते ।

जो भी आते उनके आगे—
श्रद्धा से झुक जाते
सब का हो कल्याण निरतर—
मन से यही मनाते ।

एक दिवस दो अधे आए—
त्राहिमाम चिल्लाते
अधे हैं प्रभु आँख हमे दो—
यही रहे गुहराते ।

ईसा बोले— सच बतलाओ—
ऐसा मैं कर सकता ?
ऐसा है विश्वास कि मैं ही—
दु ख–कष्ट हर सकता ?

अधे बोले— हाँ हम को है—
तुम पर ही अब आशा
पूर्ण तुम्हीं बस कर सकते हो—
अधे की अभिलाषा ।

स्पर्श किया ईसा ने ज्यो ही—
ज्योति दृगो मे आई
अधो की आँखो के आगे—
दुनिया पडी दिखाई ।

हर्षित होकर दोनो ने झट—
अपना शीश झुकाया
परम पिता का यश नित गाओ—
ईसा ने समझाया ।

एक वहीं पर गूँगा आया—
इगित से बतलया
गूँगा हूँ मै वाणी दे दो—
ईसा को समझाया ।

होकर द्रवित कहा ईसा ने—
प्रभु का कीर्त्तन गाओ
ईश्वर ही कल्याण करेगा—
सब को ही समझाओ ।

सुनते गूँगा बोल उठा था—
ईसा तेरी जय हो
तुम्हीं मसीहा हो इस जग के—
सदा तुम्हारी जय हो ।

इसी तरह कल्याण सभी का—
ईसा करते चलते
भीड अपार वहाँ लगती थी—
जब भी जहाँ निकलते ।

★★★

एक दिवस वे कहीं जा रहे—
　　एक नाव पर चढकर
साथ शिष्य भी कई वहाँ थे—
　　उनकी इस यात्रा पर ।

ईसा एक किनारे हट कर—
　　लीन ध्यान मे सोए
बाहर से बेखबर हुए वे—
　　अपने मे थे खोए ।

इतने मे ही महासिन्धु मे—
　　भीषण तूफाँ आया
नाव लहर पर काँपी सब मे—
　　चिन्ता-भाव समाया ।

ईसा को जब गया जगाया—
　　बोले तब वे करारकर
क्यो उत्पात मचा रक्खा है—
　　शान्त रहो ऐ सागर ।

सुनकर लहरे सिमट गयी थीं—
　　अतुल शान्ति थी छाई
धीरे-धीरे शान्त-भाव से—
　　नाव किनारे आई ।

लोग–बाग आश्चर्य चकित थे–
कैसा है यह मानव
प्रकृति स्वय ही इसकी आज्ञा–
मान रही है अभिनव ।

इसी तरह कल्याण सभी का–
प्रतिदिन थे वे करते
शान्त हृदय से ईश–भाव मे–
रहते सदा विचरते ।

बात यही वे सब से कहते–
'प्रभु का राज्य निकट है
मन को शुद्ध बनाए रक्खो–
आया समय विकट है ।

२१ रूपान्तरण

एक दिवस ईसा पर्वत पर—
बैठे ध्यान लगा कर
पास कई चेले भी उनके—
बैठ गए थे आकर।

सहसा एक ज्योति-सी आई—
नव प्रकाश लहराया
सब के नयनों के आगे ही—
दृश्य नया था आया।

गूसा–एलियाह–नबी सब–
उतर गगन से आए
ईसा मिले सभी से उठकर–
सबको गले लगाए ।

परम शान्तिमय ज्योति वहाँ थी–
नभ मे लाली छाई
दूर गगन से लगी झाँकने–
ऊषा की अरूणाई ।

सहसा ईसा के शरीर मे–
दिव्य विभा मुस्काई
हाड–माँस की देह अचानक–
तेज–पुञ्ज बन आई ।

ज्योति बने थे अग समुज्ज्वल–
परम ज्योति थी छाई
भू से अम्बर तक फैली थी–
नव–जीवन–तरूणाई ।

अब तो ईसा ज्योति–शिखा से–
दमक रहे थे क्षण–क्षण
सूर्य–प्रभा–सा चमक रहा था–
उनका पूरा आनन ।

श्वेत वस्त्र थे नव प्रकाश से–
जगमग–जगमग करते
श्वास–श्वास मे स्वर्ग–राज्य का–
मादक सौरभ भरते ।

सब ने देखा– अस्थि–चर्म के–
ईसा ज्योति विमल थे
परम प्रकाशित रूप अखण्डित–
उज्ज्वल और धवल थे ।

सहसा नभ मे उज्ज्वल–उज्ज्वल–
बादल के दल आए
दूर–दूर तक नव प्रकाश के–
केतु विमल फहराए ।

बादल की आवाज शान्तिमय–
सब को पडी सुनाई
सब ने देखा दृग के आगे–
सुषमित छवि खिल आई ।

गूँज रही थी प्रभु की वाणी–
ईसा तेरी जय हो
तू मेरा प्रिय पुत्र तुम्हारी–
भू पर सदा विजय हो ।

मैं प्रसन्न हूँ, भूतल पर तुम–
जन–जन को समझाओ
राज्य स्वर्ग का बहुत निकट है–
सब को मार्ग दिखाओ।

★★★

गिरि से नीचे ईसा आये–
जन–समूह भी आया
जन–जन के आनन के सम्मुख–
नव प्रकाश लहराया।

ईसा बोले– तुम सब मन मे–
नव विश्वास जगाओ
'स्वर्ग–राज्य अब बहुत निकट है –
मन को स्वच्छ बनाओ।

राई भर विश्वास रहे तो–
पर्वत भी हट सकता
चाहोगे तो क्षणभर मे ही–
सागर भी पट सकता।

दृढ विश्वास रहे तब कुछ भी–
नहीं असम्भव होगा
चाह प्रबल रहने पर भूतल–
नूतन अभिनव होगा।

किन्तु धरा पर प्रभु की इच्छा—
सब दिन चलती आए
यही चाह है कीर्ति उसी की—
सभी जगह फहराए।

देखो मानव–पुत्र शीघ्र है—
पकडा जानेवाला
धरती पर सब के सम्मुख है—
मारा जाने वाला।

लेकिन तय है तीन दिवस पर—
आएगा फिर जी कर
नया केतु फहराएगा वह—
निश्चय ही इस भू पर।

★★★

भीड भरी थी सभी लोग थे—
ईसा को ही सुनते
उनकी माता औ भाई भी—
आए सपने बुनते।

लेकिन ईसा ने बतलाया—
कौन यहाँ है भाई
कौन यहाँ है माता किसकी—
बिछुडी सब परिछाई।

कोई नहीं किसी का केवल–
प्रभु से सब का नाता
एक वही है इस दुनिया मे–
जन–जन का परित्राता ।

छोडो जग के नाते–रिश्ते–
प्रभु के ही गुण गाओ
सब से अलग–विलग होकर अब–
प्रभु मे ध्यान लगाओ ।

★★★

ईसा बोले– दो दिन पर ही–
फसह–पर्व जब आए
मेरे अपनो मे से ही कुछ–
जाएँगे मरमाए ।

फिर वे बोले– गहन तिमिर से–
कब प्रकाश है डरता
तम को दूर मिटाने का ही–
काम निरतर करता ।

शिष्यो से फिर बोले– आओ–
मन में दृढता लाओ
चाहे जो परिणाम मिले तुम–
प्रभु का गुणनित गाओ ।

वही धरा पर नव प्रकाश की—
विजय-ध्वजा फहराए
राज्य-स्वर्ग का इसी धरा पर—
बहुत शीघ्र ही लाए ॥

२२ विरोध

ईसा अपने शुद्ध हृदय से—
जन–कल्याण किया करते
जो भी दुखिया आता उसको—
आशीर्वाद दिया करते।

उनके मन मे नहीं तनिक भी—
भेद दिखाई पडता था
लेकिन कुछ लोगो के दृग मे—
कॉटे–सा यह गडता था।

वे कहते– जो पहले मूसा–
और नबी सब आए थे
उन लोगो ने जो भी अब तक–
धर्म यहाँ बतलाए थे।

ईसा उनका खण्डन करता–
राह नयी बतलाता है
चमत्कार दिखलाकर यो ही–
जन–जन को भरमाता है।

यो तो ईसा बतलाते वे–
बात नबी की कहते है
कहीं–कहीं जो छूट गयी है–
उसको पूरा करते है।

लेकिन मन मे जब विरोध की–
बात कहीं जग जाती है
एक गॉठ–सी पड जाती वह–
छूट नही फिर पाती है।

शास्त्री और फरीसी बोले–
झूठा ढोग रचाता है
दुष्टात्माओ के बल से ही–
चमत्कार दिखलाता है।

अपनी इसमे शक्ति नहीं है—
सब को ही भरमाता है
प्रभु की बात सुनाकर पगला—
यो ही भीड लगाता है ।

इसी तरह के और अनेको—
कथन वहॉ पर चलते थे
लेकिन ईसा शान्त भाव से—
सब कुछ सुनते रहते थे ।

★★★

अपने शिष्यो से वे बोले—
मन से निर्भय रहना है
जो भी आए घात उसे तो—
हॅसते—हॅसते सहना है ।

कहा कि उनसे मत डरना जा—
तन पर घात लगाते है
आत्मा पर जो घात लगाता—
उससे ईस बचाते है ।

फिर बोले वे— जाओ तुम सब—
प्रभु का यश अब फैलाओ
'राज्य स्वर्ग का बहुत निकट है —
जन—जन को यह समझाओ ।

★★★

साँझ हुई औ भीड भरी थी—
बोले सब क्या खाएँगे
ईसा बोले— मत घबडाओ—
प्रभु खुद भोजन लाएँगे ।

पास वहाँ पर पाँच रोटियां—
और मछलियाँ दो थीं
ईसा ने टुकडे—टुकडे कर—
बाँट सभी को दी थीं ।

पाँच हजार लोग सब खाकर—
अनायास ही तृप्त हुए
फिर भी भोजन अभी शेष थे—
टोकरियों से लिप्त हुए ।

एक दिवस फिर जब गलील मे—
भीड उमड कर आई थी
चार हजार लोग सब को ही—
परम तृप्ति पहुँचाई थी ।

दो रोटी औ कुछ मछली से—
सब कुछ पूरा हो आया
लोग देखते रहे भीड ने—
खूब वहाँ छक कर खाया ।

★★★

एक दिवस सागर के जल पर—
ईसा चलते आते थे
लोग—बाग सब विस्मित होकर—
उनको शीश झुकाते थे ।

ऐरुशेलम मे फिर ईसा—
सब को ही समझाते है
मरने वाले फिर जी उठते—
कभी नहीं घबडाते है ।

शास्त्री और फरीसी जन के—
मन मे आग धधकती थी
ईसा की प्रभुता के आगे—
बात न उनकी चलती थी ।

मन से क्षुब्ध हुए सब रहते—
बात न सच्ची कहते थे
घृणित भाव की ज्वाला मन मे—
सदा छिपाए रहते थे ।

सब कुछ ईसा जान रहे थे—
लेकिन बोल न पाते थे
प्रभु—इच्छा पूरी होने दो—
सब को यही बताते थे ।

धन्य सदा वे जन जो निर्भय–
प्रभु के पथ पर चलते हैं
ऐसे ही जन तो भूतल पर–
इतिहास बनाया करते हैं।

२३ षड्यन्त्र

ईसा के बढते प्रभाव से—
याजक–गण भयभीत हुए
शास्त्री और फरीसी सब कुछ–
करने को उन्नीत हुए।

ईसा के अनुयायी–जन की—
सख्या बढती जाती थी
जिससे उनके विरोधियो मे—
घबडाहट–सी छाती थी।

सोचा– किसी तरह ईसा को–
अब तो शीघ्र पकड़ना है
जैसे भी हो उस पर कोई–
भारी अंकुश धरना है ।

ईसा का था शिष्य यहूदा–
उसको सब ने फोड़ लिए
इस कुकर्म के लिए रजत के–
सिक्के उसको तीस दिए ।

★★★

ईसा अपने अहोभाव मे–
सब दिन निर्भय रहते थे
जान रहे थे सकल भविष्यत्–
किन्तु नहीं कुछ कहते थे ।

जो भी दुख से पीडित आता–
उसको देते त्राण सदा
दीन–दरिद्र जनो को हरक्षण–
देते थे सम्मान सदा ।

सब से कहते– भूखे है जो–
उनको अन्न प्रदान करो
प्यासो को शीतल जल देकर–
तन–मन की सब प्यास हरो ।

छोटे–से–छोटे जन खातिर–
जो जितना कर जाएगा
परम पिता के पास पहुँच कर–
उतना ही वह पाएगा।

और नहीं तो पिता कहेगे–
तुम आए कुछ काम नहीं
भूखा था मैं लेकिन तुमने–
दिया मुझे कुछ दान नहीं।

मै प्यासा था लेकिन तू तो–
जल तक मुझे न दे पाया
नगा था मै किन्तु एक भी–
वस्त्र न तुमने पहिराया।

मैं बीमार पडा था तुमने–
मेरी कोई खबर न ली
मैं भिक्षुक था तुमने कानी–
कौडी तक भी कभी न दी।

सच कहता हूँ, जो भी याचक–
बनकर सम्मुख आता है
उसकी सेवा करनेवाला–
ईश्वर को ही पाता है।

सच कहता हूँ धर्म प्रथम है—
जन–जन की सेवा करना
दीन–अपाहिज–भिक्षुक जन की—
सेवा मे तत्पर रहना।

ईसा बोले— रहो जागते—
विकट समय अब आया है
देख रहा हूँ, अपना जन भी—
आज बहुत भरमाया है।

ऐसा ही था समय कि भू पर—
जल प्लावन जब आया था
कुछ क्षण पहले तक कोई भी—
जान नहीं कुछ पाया था।

नूह स्वय भी उस जहाज मे—
हँसते मोद मनाते थे
सभी तरह के जीव नाव मे—
सुख से समय बिताते थे।

पता नहीं था वहाँ किसी को—
जल–प्लावन अब आएगा
जल–प्रवाह मे पडकर भूतल—
नष्ट–भ्रष्ट हो जाएगा।

वही समय है देखो भू पर—
घटा घुमड़ने वाली है
दिन की खुली रोशनी को अब—
रात निगलने वाली है।

रहो जागते समय न बीते—
पीछे तुम पछताओगे
एक दूसरे के कोई भी—
काम नहीं आ पाओगे।

★★★

जागो और अहर्निश प्रभु को—
अपने मन से याद करो
पूर्ण सदा हो प्रभु की इच्छा—
तुम मत शोक–विषाद करो ॥

२४ अंतिम भोज

संध्या की झुटपुट बेला थी—
दिनमणि ढलनेवाला था
दिन का दीप्त प्रकाश अतल मे—
तुरत सिमटनेवाला था।

भौतिकता से ऊपर उठकर—
ईसा का था ध्यान कही
पास—पास ही बैठे थे सब—
उनके बारह शिष्य वहीं।

हिलमिल कर खा रहे सभी जन–
फसह–पर्व का था भोजन
सहसा ईसा बोल उठे थे–
आता है सकट भीषण ।

तुम मे से ही एक मुझे अब–
तुरत कैद करवाएगा
लोभ–ग्रस्त वह घृणित पाप से–
दामन बचा न पाएगा ।

एक–एक कर लगे पूछने–
मै तो प्रभु वह व्यक्ति नहीं ?
सच बतलाएँ कौन मूढ वह–
जिसमे तेरी भक्ति नहीं ?

ईसा बोले– साथ कटोरे–
मे था जिसने हाथ दिया
उसने मेरे हत्यारे को–
चुपके से है साथ दिया ।

बोला तुरत यहूदा– रब्बी ।
सच बतलाएँ क्या मै हूँ ?
ईसा ने तब कहा– स्वय ही–
कहता फिर क्या उत्तर दूँ ।

सुनकर सब जन ठगे–ठगे से–
मौन तुरत हो जाते हैं
ईसा ही तब उनको अपने–
मन की बात बताते हैं।

कहते हैं अब प्रभु की इच्छा–
भू पर पूरी होने दो
महाप्रलय के जल से सब को–
अपना आनन धोने दो।

रोटी लेकर हाथो मे फिर–
टुकडे–टुकडे उसे किया
एक–एक कर शिष्यो को फिर–
अपने हाथो ग्रास दिया।

कहा कि खाओ मोद मनाओ–
समझो मेरी देह यही
प्याला देकर कहा कि इसमे–
मेरे खूँ की धार बही।

यही लहू है पर–हित मे जो–
यहाँ बहाया जाएगा
बहुतो के सब पाप–ताप को–
क्षमा यही दिलवाएगा।

वदन कर जैतून शिखर पर—
एक साथ सब आते है
ठोकर खाओगे तुम सब भी—
शिष्यो को बतलाते है !

पतरस बोला— नहीं–नहीं मैं—
ठोकर कभी न खाऊँगा
अन्त तलक तक साथ रहूँगा—
नहीं छोडकर जाऊँगा !

ईसा बोले— तुमको भी मैं—
बात अभी समझाता हूँ,
तीन बार तुम भी त्यागोगे—
सच्ची बात बताता हूँ !

मुर्गा जब तक बॉग न देता—
सब कुछ घट ही जाएगा
देख सको तो रहो देखते—
भारी सकट आएगा !

★★★

गए सभी जन सोने ईसा—
शान्त भाव से जगते है
प्रभु के वदन आराधन मे—
ध्यान लगाए रहते है !

इतने मे ईसा के सम्मुख–
पुन यहूदा।आता है
याजक–गण के लोगो को भी–
साथ वहीं पर लाता है।

ईसा को उसने झट चूमा–
झुक कर विनय प्रणाम किया
यही व्यक्ति है ईसा सबको–
ऐसे ही सकेत दिया।

ईसा बोले– आए हो जो–
करने उसको याद करो
किसी तरह की उलझन मे पड–
समय नहीं बर्बाद करो।

खडे जनो ने ईसा को फिर–
बदी तुरत बनाए थे
वही महायाजक के सम्मुख–
उसी घडी ले आए थे।

ढोग न्याय का हुआ वहाँ पर–
साक्ष्य जुटाए जाते थे
मृत्यु–दण्ड के योग्य बहुत है–
यही बताए जाते थे।

पतरस भी उस घडी भीड मे—
एक किनारे रहा खडा
तभी किसी ने पूछा उससे—
तू था इसके साथ खडा ?

पतरस बोला— नहीं नहीं मै—
इसको क्योकर पहचानूँ,
तीन बार अजनबी बना वह—
बोला—कैसे क्या जानू ?

इतने मे मुर्गे की बोली—
उसको पडी सुनाई थी
तभी याद कर प्रभु की वाणी—
आँखे भर—भर आई थी।

★★★

झूठा था अभियोग मगर अब—
मृत्यदण्ड ही पाना था
कथन नबी का जो था पहले
उसको सत्य बनाना था!

प्रभु का निन्दक है यह ईसा—
सब ने दोष लगाया था
राज्यपाल था वहाँ पिलातुस—
वहीं उसे पहुँचाया था।

राज्यपाल की रीति यही थी—
किसी एक को मुक्त करे
जनता जिसको चाहे उसको—
पर्व—समय सयक्त करे।

उसी समय बर अब्बा नामक—
डाकू भी था बन्द पडा
जनता बोली— उसको छोडो—
वह दोषी है नहीं बडा।

डाकू छूट गया पर ईसा—
मृत्यु—दण्ड ही पाते हैं
जग के कुत्सित मुँह पर हँस—हँस—
कालिख और लगाते है।

जब भी पाप धरा पर बढता—
तब अनर्थ ही होता है
दुष्टाचारी आदर पाते—
साधु सताए जाते हैं।

लेकिन प्रभु की इच्छा जग मे—
सब से ऊपर चलती है
निविड निशा के अतल गर्त से—
रवि की रश्मि निकलती है॥

२५ यहूदा का पश्चाताप

पाप–कर्म जब होते मस्तक–
अपने ही झुक जाता है
लेकिन बीता हुआ समय फिर–
वापस कभी न आता है।

ईसा मारा जायेगा सुन–
स्वय यहूदा कॉप उठा
भीषणतम आसन्न विपद पर–
अपने मे था भॉप उठा !

चॉदी के कुछ टुकडो पर ही—
उसने कैसा कर्म किया ?
शान्ति—मूर्त्ति निष्कलुष व्यक्ति के—
साथ बडा अपकर्म किया ।

पश्चातापी घोर अनल मे—
उसके प्राण धधकते थे
महाप्रलय के इधन मानो—
दृग मे आज सुलगते थे ।

मन से रोते और बिलखते—
याजक—गण के पास गया
कहा कि ले लो सारे सिक्के—
जग से अब विश्वास गया ।

एक विमल निर्दोष लहू का—
सौदा करके बुरा किया
लगता अपनी छाती मे ही—
मैने खञ्जर भोक लिया ।

नहीं किसी ने बात सुनी तब—
मन से बेहद घबडाया
मदिर मे ही फेके सिक्के—
रोता अपने घर आया ।

घर आकर तत्क्षण ही उसने–
फॉसी स्वत लगायी थी
अपने किए सभी पापो से–
भव से ऑख चुरायी थी।

मंदिर के अधिकारी बोले–
सिक्के पास न लाएँगे
मूल्य लहू के हैं ये सिक्के–
इन्हे न रखने पाएँगे।

इन सिक्को से सबने मिलकर–
कब्र–स्थल था बनवाया
और 'लहू का खेत' नाम का–
उस पर पत्थर खुदवाया।

आज तलक यह खेत यहूदा–
पर कुछ अश्रु बहाता है
ईसा का बलिदान अमर है–
जन–जन को बतलाता है॥

२६ ईसा का प्राणोत्सर्ग

विकल लेखनी देख रही है—
मानवता अकुलाती है
मनुज—पुत्र के लाल रक्त से—
अपनी सेज सजाती है ।

करुणा की जो मूर्त्ति उसी पर—
निर्दयता लहराती है
श्रद्धा के वट—विटप छाँह मे—
हिसा मोद मनाती है ।

अपनो से विश्वास अचानक—
यहाँ उखडने लगता है
अन्तर–तर मे घृणित भाव का—
ज्वाल धधकने लगता है।

मृत्यु–दण्ड है मिला उसे जो—
नव जीवन सुखदाता है
स्वय क्रूस पर चढता है जो—
धरती का जन–त्राता है।

यह विरोध की आग धरा पर—
कब तक जलती जाएगा ?
कौन शक्ति है जो फिर जगकर—
जग का दाह मिटाएगी ?

देखो मानव–पुत्र स्वय ही—
क्रूस उठाए आता है
बलि–वेदी पर क्षमाशील ही—
आज चढाया जाता है।

हँस–हँस कर अन्याय न्याय का—
करता नित उपहास रहा
किन्तु धरा पर जीवन–दानी—
रचता नव इतिहास रहा।

चढे क्रूस पर ईसा जैसे—
दिनमणि तक था झुक आय
मिटा प्रकाश—विकास दिवा का—
तम—ही—तम भू पर छाया।

ढलते दिन के शान्त प्रहर मे—
प्राण—दान देकर सत्वर
ईसा ने सदेश दिया था—
यह मसीहा है सदा अमर।

डोल उठी थी पृथ्वी क्षण मे—
कडक उठा था यह अम्बर
अन्धकार घिर आया पल मे—
गूँज उठा था भीषण स्वर।

मदिर के पर्दे तक फट कर—
टुकडे—टुकडे बिखर गए
कॉप उठे वट—वृक्ष धरा के—
भू के कण—कण सिहर गए।

कब्रो के मुँह खुले अचानक—
सोए शव भी डोल उठे
पुण्य—पवित्र जीव सब जग कर—
क्रन्दित—स्वर मे बोल उठे।

सभी लोग भयभीत हुए से—
कहते थे बस बात यही
सचमुच यही मसीहा है औ —
ईश्वर का है पुत्र सही।

★★★

यूसुफ नामक एक शिष्य ने—
कब्र नयी खुदवायी थी
उसमे दफनाकर ईसा को—
श्रद्धाविनय सुनायी थी।

बहुत लोग थे आए सब पर—
भारी मातम छाया था
मरियम भी थी वहीं कि जिसने—
अपना लाल गँवाया था।

ईसा ने था कहा कि वह फिर—
तीन दिनो मे जीयेगा
जाकर वह गलील मे अपने—
जन को फिर दर्शन देगा।

★★★

इसीलिए सब कब्रगाह मे—
जगकर समय बिताते थे
ईसा के करूणा की गाथा—
मन—ही—मन दुहराते थे।

पहरे पर तैनात सिपाही—
बोल न कुछ भी पाते थे
मन से विगलित होकर वे भी—
झर-झर अश्रु बहाते थे।

ईसा का यह प्राण-समर्पण—
भू पर भारी उत्सव था
नयी सृष्टि अब आएगी ही—
रूप उसी का अभिनव था।

गूँज उठी थी भू अम्बर तक
अक्षय करूणा की जय-जय
परम पुरूष का होता है ज्यों—
परम वदना का अभिनय॥

२७ पुनरुत्थान

जैसे–तैसे तीन दिवस थे–
बीत गए अकुलाते
ईसा कैसे कब जागेंगे–
कोई समझ न पाते ।

ईसा की उस पुण्य कब्र पर–
आए सब नर–नारी
धीरे–धीरे जुटी अचानक–
भीड़ वहाँ पर भारी ।

वेला थी वह पौ फटने की—
मलयानिल था चलता
पूरब के अम्बर मे जगमग—
सूरज दिखा निकलता ।

तभी अचानक दिग्–दिग् सिहरा—
लगी काँपने धरती
एक ज्योति–सी पडी दिखाई—
सहसा वहाँ उतरती ।

क्षणभर मे ही मानव–जैसा—
ज्योति–पुञ्ज हो आया
लगा कि कोई स्वर्गिक सपना—
धरती पर लहराया ।

विद्युत–सी थी देह वस्त्र थे—
हिम के जैसे उज्ज्वल
परम दीप्ति–से दमक रहा था—
उसका नव मुख–मण्डल ।

स्वर्ग–दूत परमेश्वर का था—
आया ज्योति–सँवारे
पुण्य कब्र के पत्थर पर वह—
बैठा एक किनारे ।

उसे देख सब लगे वहाँ पर—
भय से कँपने थर—थर
पहरे पर तैनात पहरूए—
मृतक सदृश थे भू पर।

स्वर्ग—दूत ने कहा कि तुम सब—
ढूँढ रहे हो जिसको
पा न सकोगे मुर्दे—जैसा—
यहाँ कब्र में उसको।

जैसा था उसने बतलाया—
मर कर पुन उठा है
ईश्वर का वह पुत्र जगत के—
हित म पुन जुटा है।

यदि विश्वास नहीं तो देखा—
कब्र मिलेगी खाली
फिर भी सब दिन वही करेगा—
धरती की रखवाली।

जाकर उसके सब शिष्यो को—
बात यही बतलाओ
ईसा के वचनो को कहकर—
सब को धैर्य बँधाओ।

इतना कह कर स्वर्ग–दूत तो–
गया मगर प्रभु आए
ईसा स्वय वहीं पर आकर–
मन्द–मन्द मुस्काए ।

सब ने उन्हे प्रणाम किया फिर–
मन की बात सुनाई
कैसे प्रभु, अब त्राण मिलेगा–
कठिन घडी घिर आई ?

ईसा ने फिर कहा– डरो मत–
प्रभु मे ध्यान लगाओ
करुणा–कर प्रभु त्राण करेगा–
उसका ही यश गाओ ।

कह दो मेरे जन से जल्दी–
सब गलील मे आएँ
दीन–दुखी जन की सेवा मे–
अपना हृदय लगाएँ ।

मै भी वहीं मिलूँगा जाओ–
जल्दी उन्हे बताओ
ईसा मर कर पुन उठा है–
सब को ही समझाओ ।

★★★

ईसा के ग्यारह शिष्यो ने—
उनकी बात सुनी थी
ईसा की अन्तिम आज्ञा को—
मन से वहॉ गुनी थी ।

ईसा बोले— देखो यह नभ—
कितना खुला खिला है
स्वर्ग और धरती का मुझको—
सब अधिकार मिला है ।

सारी दुनिया घूम—घूम कर—
सबको शिष्य बनाओ
करूणा से ही प्रभु है मिलते—
सब को ही समझाओ ।

मेरी आज्ञा पालन करना—
सब को ही सिखलाओ
मानवता की सेवा मे ही—
अपना हृदय लगाओ ।

तुम पाओगे साथ तुम्हारे—
मै हूँ प्रतिक्षण रहता
तेरे ही माध्यम के द्वारा—
मैं हूँ सब कुछ कहता ।

युग के अन्त समय तक प्यारे–
साथ रहूँगा तेरे
जब भी चाहो देख सकोगे–
मुझको साँझ सवेरे।

★★★

अतिम आज्ञा देकर ईसा–
हाथ उठा कर सम्मुख
करे ईश कल्याण कहा था–
होकर सब के अभिमुख।

और पुन आलोक सदृश ही–
चढे गगन तक ऊपर
दिव्य विभा मे लीन हुए फिर–
परम ज्योति अविनश्वर।

★★★

ईसा आज सदेह नहीं है–
गुजित घर–घर वाणी
जन–जन के हित–साधन मे है–
पावन ध्वनि कल्याणी।

दीन–दुखी जन मे प्रभु रहते–
सब है यही बताते
दुखियो की सेवा मे लगता–
ईसा ही है आते।

क्षुधा-ग्रस्त जब भोजन करता-
प्यासा पीता पानी
लगता है तब सत्य हुई है-
ईसा की ही वाणी !

★★★

ईसा तुम्हे प्रणाम कि तुमने-
जग को राह दिखाई
सेवा मे प्रभु का दर्शन है-
सब को बात बताई !

जब तक सूरज-चॉद रहेगा-
तेरी बात रहेगी
तेरी करूणामय सब गाथा-
दुनिया स्वय कहेगी !

जय-जय ईसा दिव्य मसीहा-
तेरी सब दिन जय हो
तेरे करुणा-पथ पर सब दिन
भूतल चले अभय हो ॥

★ समाप्त ★